RNI No. 7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 61 अंक : 04 प्रकाशन तिथि : 25 मार्च कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 अप्रेल, 2024
शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

होली की हार्दिक शुभकामनाएं

IAS / RAS

तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

स्प्रिंग बोर्ड

Spring Board

Springboard Academy,
Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda,
Gopalpura, Bypass Jaipur

Website : www.springboardindia.org

संघशक्ति

4 अप्रेल, 2024

वर्ष : 61 अंक : 04

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

समाचार संक्षेप		04
चलता रहे मेरा संघ	श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर	05
पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	श्री चैनसिंह बैठवास	07
युग पुरुष पूज्य श्री तनसिंह जी	श्री सुमेरसिंह गुड़ा	10
श्री क्षत्रिय युवक संघ ही क्यों?	श्री गिरधारी सिंह डोभाड़ा	11
संकल्प की शक्ति	आचार्य श्री महाप्रभ	16
मैं क्षत्रिय हूँ मेरे कलेजे को देखो	श्री युधिष्ठिर	18
क्षत्रिय शृजेता बने श्रेष्ठता का परिचय दें	श्री गुमानसिंह भुण्ड़वा	21
युग पुरुष पूज्य श्री तनसिंह जी	स्व. श्री सूरतसिंह कालवा	25
महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	श्री भंवरसिंह मांडासी	27
जमाने को चुनौती	स्व. श्री उदयभानसिंह जी चनाणा	28
बीकानेर रियासत का संक्षिप्त इतिहास	श्री खींवसिंह सुलताना	29
अपनी बात		33

समाचार संक्षेप

समाज के विधायकों की बैठक :

राजस्थान विधानसभा चुनावों में जीते हुए समाज के विधायकों को 8 फरवरी को संघशक्ति प्रांगण में आमंत्रित किया गया था। राजनीति में आज ये लोग समाज के प्रतिनिधि हैं। समाज के लोगों का कहीं कार्य उलझता है तो इन प्रतिनिधियों के माध्यम से उसे सुलझाने की समाज की इच्छा रहती है। अतः इन लोगों को भी अपना यह दायित्व समझकर इसके अनुसार अपनी कार्यशक्ति लगानी चाहिए। राजनैतिक रूप से समाज के साथ कुछ ठीक नहीं होता हो, समाज की उपेक्षा होती हो तो उसके विरुद्ध मोर्चा समाज के जीते हुए विधायक खोलें तो सम्भावनाएँ उपेक्षा दूर होने की बनती हैं। अपनी ऐसी जिम्मेदारी महसूस करें यह विधायकों से समाज अपेक्षा करता है। विधायक ऐसा कर सकें इसके लिए सभी को परस्पर एकता बनाये रखनी पड़ेगी। उसी के लिए ऐसा मिलना समय-समय पर होता रहे और समाज की स्थिति व अपेक्षा पर चर्चा होती रहे, यह आवश्यक है।

आर्थिक आधार पर जो केन्द्र सरकार ने आरक्षण दिया है उसमें कुछ अव्यवहारिक शर्तें लगा दी गई हैं जिसके कारण केन्द्रीय नौकरियों में राजपूतों को कोई लाभ नहीं मिल रहा है। उन अव्यवहारिक शर्तों को हटाने के लिए प्रयासरत हैं लेकिन केन्द्र सरकार की ओर से कुछ सकारात्मक रुख नहीं दिखाई दे रहा है, इसलिए समाज में निराशा फैल रही है। इस संदर्भ में विधायकों से अनुरोध किया गया कि विषय पर सरकार का सकारात्मक रुख पैदा करने में सहयोग करें।

भाजपा कार्यालयों पर धरना :

आर्थिक आधार की शर्तों के सरलीकरण हेतु राजस्थान के हर जिले में भाजपा कार्यालयों के सामने धरना दिया गया। धरने के बाद केन्द्र सरकार द्वारा आर्थिक आधार के आरक्षण में अव्यवहारिक शर्तें हटाने के लिए कार्यालय में ज्ञापन सौंपा गया और यह अनुरोध किया गया कि हमारी इस मांग को केन्द्र सरकार तक पहुंचाएँ। श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन का यह अभियान 8 फरवरी को प्रारम्भ किया गया और आगे चलता रहा।

श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की वार्षिक बैठक :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के अनुषांगिक संगठन श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की वार्षिक बैठक 10 फरवरी को संघशक्ति प्रांगण में सम्पन्न हुई। पूरे प्रदेश से आमंत्रित सदस्य बैठक में पहुँचे। वर्ष भर के कार्यों की समीक्षा की गई और आगामी वर्ष हेतु कार्ययोजना बनाई गई। सभी सदस्य अपने क्षेत्र में होने वाले श्री क्षत्रिय युवक संघ के शिविर में पहुँचने का प्रयास करें तथा अपने साथ उठने-बैठने वालों को संघ से परिचित करवाएँ। अपने-अपने क्षेत्र में अधिक बैठकें आयोजित करें। पूरे वर्ष की गतिविधियों का कैलेण्डर बनाने पर भी चर्चा हुई।

संघप्रमुखश्री का गुजरात प्रवास :

संघ प्रमुखश्री 23 फरवरी को जयपुर से रवाना होकर भावनगर पहुँचे। 24 फरवरी से खोडियार माता मंदिर में दर्शन कर आगे नारी गाँव पहुँचे। नारी में शाखा के स्वयंसेवकों से मुलाकात की। नारी से धोलेरा आए और वहाँ स्वयंसेवकों के परिवारों से मिले। वहाँ से शाम को काणेटी पहुँच कर स्नेह-मिलन कार्यक्रम में सम्मिलित हुए। रात्रि विश्राम साणंद में रहा। 25 फरवरी को बाड़मेर पहुँचे।

●

चलता रहे मेरा संघ

(भवानी निकेतन, जयपुर में आयोजित उच्च प्रशिक्षण शिविर–2023 में माननीय संरक्षक श्री भगवान सिंह जी रोलसाहबसर द्वारा 25.5.2023 को प्रदत्त प्रभात संदेश)

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूः मा ते सङ्गोस्त्वकर्मणि।।

गीता का संदेश.. कर्म करने में ही तुम्हारा अधिकार है, फल में नहीं। कर्म का त्याग भी नहीं करना है, निष्काम बने रहना है। क्षत्रिय युवक संघ की शिक्षा निष्काम भाव से की गई तपस्या है, उपासना है, वंदना है, आराधना है। यह ग्यारह–बारह दिन का शिविर प्रवास कम पड़ता है इस बात को समझाने और समझने में। हमारी व्यावहारिक जगत की समस्याएँ हैं इसलिए और अधिक समय दिया नहीं जा सकता।

इस मूल बात को समझने में...बाह्य जगत और अंतर्जगत इन दोनों के सहयोग की आवश्यकता है और इन दोनों को बदलने की आवश्यकता है। हमारे अंतर में क्या–क्या भाव आते हैं, निष्काम बनने के विरुद्ध– सामान्यतया माना यही जाता है कि कोई भी कार्य बिना कामना के किया नहीं जा सकता, बिना इच्छा के किया नहीं जा सकता और वह बिलकुल स्वाभाविक लगता है और इसीलिए इच्छाओं में डूबे रहते हैं, कामनाओं में डूबे रहते हैं। कामना कभी पूरी नहीं होती। हवन में, यज्ञ में हम आहुति डालते जाएँगे तो अग्नि बुझेगी नहीं, भड़केगी। इसी तरह से कामनाओं में भोग को ध्यान में रख कर, हम यदि कामनाओं की पूर्ति में लगे रहे तो यह भड़कती रहेगी।

काम कभी पूरा नहीं होगा और काम पूरा न होने पर, कामना की पूर्ति न होने पर क्रोध का जागरण होता है। हम अपने आप पर आक्रोशित होते हैं, घटनाओं पर आक्रोशित होते हैं, संबंधित लोगों पर आक्रोशित होते हैं और यह क्रोध हमारे विवेक को नष्ट कर देता है और विवेक के नष्ट होते ही हम पतित हो जाते हैं। यह बात समझने में बहुत समय लगता है, इसका अभ्यास करने में बहुत समय लगता है। लेकिन क्षत्रिय युवक संघ की साधना बहुत सरल है, बहुत सुगम है और बहुत व्यावहारिक है।

दुनिया में हमको किस प्रकार का व्यवहार करना है... यह हमको तय करना है। दुनिया हमारे अनुसार चलने वाली नहीं है और हमारा दुनिया के अनुसार हो जाना भी श्रेष्ठ बात नहीं है। दुनिया का बहाव बाहर की ओर है, पतन की ओर है, उस पतन के मार्ग को मोड़ना... बांधना नहीं है, रोकना नहीं है... उनको सही दिशा देना हमारा काम है, क्षत्रिय युवक संघ का काम है। और इसी तरह से हमारे अंतर्जगत में क्या–क्या खेल हो रहे हैं... और जो इनको समझने लगता है वह अपने आप पर हंसता है... वाह रे भगवान! तुमने क्या माया बनाई है। तुम कहते हो आगे बढ़ो और तुमने जो माया बनाई है वह हमको हमारी ही ओर खींच रही है। यही संघर्ष अंतर्जगत का है। हमको माया को छोड़ना है।

एक तरफ परमेश्वर है, एक तरफ जीव है, बीच में माया है। परमेश्वर जीव को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है और माया अपनी ओर आकर्षित कर रही है। किसकी जीत होती है? जो निष्काम नहीं है वो हार जाएगा और ज्यों ही हम निष्काम बनें, त्यों ही जीत हमारी होगी और यही परमेश्वर की चाह है कि तुम जीतो, मैं लगातार तुम्हारा ध्यान रख रहा हूँ। और यह माया भी किसी और ने नहीं बनाई है, भगवान की बनाई हुई है, हमारी परीक्षाओं के लिए, हमको और अधिक मजबूत बनाने के लिए। इस बात को समझ कर हम जब

कर्तव्य कर्म करते हैं तभी हम निष्काम भाव से कर पाएंगे, फल की चिंता नहीं करेंगे। निष्काम का अर्थ यही है कि हम फल की चिंता ना करें। फल देना हमारे हाथ में नहीं है और इसलिए कर्म करके क्या होगा, इस पर विचार ना करें। यह परमेश्वर अपने आप समझते हैं।

हमारा काम कर्म में लगे रहना है, कभी निष्कर्म नहीं बनना है, कभी निष्क्रिय नहीं बनना है, सदैव कर्मशील बने रहना है। 'कर्मशील हुए बिना मिटी कभी तबाही''... जो तबाही दुनिया में हो रही है वो हमारी निष्क्रियता के कारण हो रही है। क्षत्रिय... रजोवृत्ति... वो सदैव सक्रिय रहती है और वो यदि निष्क्रिय होती है तो वह समाज डूब जाता है, वह राष्ट्र डूब जाता है और नुकसान होता है मानवता को। हम परमपिता परमेश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि... 'जल-जल कर उठने वालों को दो मंगल वरदान...' भगवान से यही प्रार्थना है। सदैव भगवान को याद रखें। कर्म करें और उसको डाल दें... कर्म करें और उसको समर्पित कर दें भगवान को। और कोई भी कर्म निष्फल नहीं रहता, फल अवश्य मिलेगा, कामना ना करें। छोटी सी बात है, किंतु बहुत गहरी बात है। वो हमको हृदयस्थ करना है। आज के मंगल प्रभात में क्षत्रिय युवक संघ की ओर से हम सबके लिए यही मंगल संदेश हैं। ●

मनुष्य के प्रकार

प्रवचन के उपरान्त एक जिज्ञासु राजा ने भगवान बुद्ध से प्रश्न किया -

''महाराज आपने अभी-अभी कहा कि मनुष्य चार प्रकार के होते हैं। कृपया समझाएँ।''

भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया-''मनुष्य चार प्रकार के होते हैं-एक तिमिर से तिमिर में जाने वाला; दूसरा तिमिर से ज्योति की ओर जाने वाला; तीसरा ज्योति से तिमिर की ओर जाने वाला और चौथा, ज्योति से ज्योति में जाने वाला।

राजन! यदि कोई मनुष्य चाण्डाल, निष्पाद आदि हीन कुल में जन्म ले और जन्मभर दुष्कर्म करने में बिताए तो उसे मैं तिमिर से तिमिर में जाने वाला कहता हूँ।

यदि कोई मनुष्य हीन कुल में जन्म ले तथा खाने-पीने की तकलीफ होने पर भी मन-वचन कर्म से सत्कर्म का आचरण करे तो मैं ऐसे मनुष्य को तिमिर से ज्योति में जाने वाला कहता हूँ।

यदि कोई मनुष्य महाकुल में जन्म ले, खाने-पीने की कमी न हो, शरीर भी रूपवान व बलवान हो, किन्तु मन-वचन तथा काया से वह दुराचारी हो, तो मैं उसे ज्योति से तिमिर में जाने वाला कहता हूँ।

किन्तु जो मनुष्य अच्छे कुल में जन्म लेकर सदैव सदाचरण की साधना करता हो, तो मैं उसे ज्योति से ज्योति में जाने वाला मनुष्य मानता हूँ।''

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

पूज्य श्री तनसिंह जी एक क्षत्रिय थे। वे क्षत्रियोचित गुणों से सम्पन्न थे। क्षत्रियोचित गुणों से सम्पन्न व्यक्ति में ईश्वरीय भाव होता है। उनमें ईश्वरीय भाव था। ईश्वर की तरह सम्पूर्ण प्रजा के प्रति जो भाव होता है, वह ईश्वरीय भाव है। क्षत्रिय वर्ग में यही–ईश्वरीय भाव है, इसलिए पूज्य श्री का क्षत्रियों से विशेष प्रेम था, अपनी जाति से विशेष प्रेम था। वे जाति को मातृ स्वरूपा–मानकर उसकी सेवा को ही आद्यशक्ति की अर्चना मानते थे। इस तरह पूज्य श्री का अपनी जाति से विशेष प्रेम देखकर कोई सामान्य जन कह सकता है कि वे जातिवादी थे, लेकिन वे जातिवादी नहीं थे। पूज्य श्री को तो अपनी उस जाति से प्रेम था जो संपूर्ण संसार को संरक्षण प्रदान करती थी, जिसका उद्देश्य ही सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय था, जिसकी छत्रछाया में सारा संसार फलता–फूलता था और सुखद अहसास का अनुभव करता था। उनका उस जाति से प्रेम था जिसका उद्‌भव दूसरों के त्राण व रक्षण के लिए हुआ हो।

धर्म सृष्टि की शाश्वत आवश्यकता है। क्षात्र धर्म जैसे श्रेष्ठ धर्म को धारण करने वाला जातिवादी कैसे हो सकता है? वे तो जातिवादी भाव से ऊपर उठे हुए थे। सभी जातियों को समान भाव से देखने वाले, सभी का समान भाव से आदर करने वाले वे निष्पक्ष-महापुरुष थे। पूज्य श्री ईश्वरीय भाव से परिपूर्ण उदात्त चरित्र के पर्याय थे। वे अपने पास आने वालों का संरक्षण व मार्गदर्शन करते थे। उनके जीवन के ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहाँ प्रचलित जातिवाद उन्हें छू तक नहीं पाया। उनकी हर जगह एक आदर्श क्षत्रिय की भूमिका रही है। एक ऐसा ही उदाहरण 1977 के बाद की लोकसभा का है, जहाँ जातिवाद से ऊपर उठकर उनके पास आने वालों का उन्होंने एक क्षत्रिय की भाँति स्वाभाविक मार्गदर्शन किया।

1977 की लोकसभा में वे राजस्थान से चुने गए एकमात्र राजपूत सांसद थे। इस लोकसभा में संयुक्त विपक्ष की जीत के कारण राजस्थान के अनेक नये सांसद लोक सभा में पहुँचे। गंगानगर से वर्तमान लोकसभा सांसद एवं पूर्व मंत्री निहालचंद के पिता बेगाराम मेघवाल (गंगानगर), कम्युनिस्ट पार्टी के नेता एवं पूर्व सांसद श्योपतसिंह के पिता चौधरी हरीराम मक्कासर (बीकानेर), डूंगरपुर बांसवाड़ा से सांसद हीरा भाई भील आदि ग्रामीण परिवेश के सांसद मात्र साक्षर भर थे। इन सभी का अधिकांश समय पूज्य श्री तनसिंह जी को आवंटित आवास 225, नोर्थ एवेन्यु, नई दिल्ली में बीतता था। इनके अलावा राज्यसभा सांसद चौधरी नत्थीसिंह, झुंझुनूं से सांसद कन्हैयालाल जाट, चितौड़गढ़ से सांसद सेठ श्यामसुन्दर सोमाणी आदि का भी पूज्य श्री तनसिंह जी के आवास पर आना–जाना रहता था। ये सभी सांसद पूज्य श्री के मार्गदर्शन में ही संसदीय कार्यवाही के बारे में समझ रहे थे। राजस्थान से जुड़े मामलों में पूज्य श्री से लगातार विचार–विमर्श कर उनके निर्देशानुसार कार्य करते थे। सभी लोग पूज्य श्री तनसिंह जी को स्वाभाविक रूप से अपना नेता स्वीकार कर आवश्यक मार्गदर्शन लेते एवं पूज्य श्री उनका पूरा मान–सम्मान करते हुए उन्हें संसदीय रीति–नीति से अवगत करवाते रहते थे। एक बार उनके आवास पर ये सभी सांसद किसी गम्भीर विषय पर विचार–विमर्श कर रहे थे– इसी बीच गंगानगर सांसद बेगाराम मेघवाल देहाती भाषा में कुछ बोलने लगे। बांसवाड़ा सांसद हीरा भाई भील ने बागड़ी भाषा में उन्हें टोकते हुए कहा कि

आपणै तो अंधेरा में भालो लाग्यो है अर्थात् अपन सांसद तो बन गये हैं पर इतनी अपने में समझ नहीं है, इसलिए ठाकुर साहब की गम्भीर बातों में बीच में मत बोला करो। पूज्य श्री तनसिंह जी ने उन्हें कहा- हम सभी की तरह ये भी भारतीय संसद के सम्मानित सांसद हैं, बोलना इनका अधिकार है, ये जैसा बोलें, इन्हें बोलने दें, धीरे-धीरे समय के साथ लोकसभा की कार्यवाही देखकर सीख जाएँगे। पूज्य श्री तनसिंह जी के इस स्नेहमय मार्गदर्शन का ही प्रभाव था कि ये सभी विभिन्न जातियों एवं विचारधाराओं से संबद्ध सांसद उनके साथ रहते थे एवं उनका पूरा सम्मान करते थे। संसद के बाहर एवं भीतर पूज्य श्री तनसिंह जी उन्हें संसदीय परम्पराओं व दिल्ली की राजनीति के दांवपेच से अवगत करवाते रहते थे। यह था उनका स्वाभाविक ईश्वरीय भाव जिसके कारण अन्य लोग उन्हें स्वतः स्फूर्त अपना अग्रगामी मानते थे।

पहले यह बता चुके हैं कि पूज्य श्री तनसिंह जी ईश्वरीय भाव से परिपूर्ण थे इसलिए वे जातिवाद से ऊपर उठे हुए, सभी जातियों को समान भाव से देखते थे एवं सभी का समान भाव से आदर करते थे। उनके जीवन में अनेक ऐसी घटनाएँ घटी हैं जो यह दर्शाती हैं कि जातिवाद उन्हें छू तक नहीं सका।

आजादी के आंदोलन के अंतिम चरण से ही इस देश में वोटरों के ध्रुवीकरण के नाम पर जातीय संघर्ष की नींव लग चुकी थी। गाँवों में सदा से साथ रहने वाले जाति समाजों के बीच वोट की राजनीति ने खाई पैदा करना प्रारम्भ कर दिया था। देश का बुद्धिवादी वर्ग अपने स्वार्थों की पूर्ति बाबत इस प्रकार के भेद को प्रोत्साहित कर रहा था। यह बुद्धिवादी वर्ग अपना हित साधने के लिए जाति समाजों के बीच वैमनस्य पैदा कर जातीय संघर्ष पैदा कर इस खाई को बढ़ाने में प्रयासरत था। लेकिन उसी समय अनेक समझदार लोग इस दुराव को बढ़ाने की अपेक्षा कम कर जाति समाजों को जोड़ने का प्रयास कर रहे थे। राजस्थान में राजपूतो और जाटों के बीच दुराव का प्रारम्भ आजादी के आंदोलन से ही प्रारम्भ हो चुका था। सत्ता में आने को लालायित बुद्धिवादी वर्ग इस दुराव (खाई) को बढाकर राजपूतों को अलग-थलग करने को प्रयासरत था और वह काफी हद तक इसमें सफल भी रहा।

भारत आजाद हुआ। कांग्रेस पार्टी सत्ता में आई। तत्कालीन कांग्रेस सरकार जानती थी कि राजपूत वर्ग लम्बे समय से सत्ता में रहे हैं। आम जनता में इनके प्रति यदि नफरत पैदा नहीं की गई तो हमारा सत्ता पर काबिज रहना संभव नहीं है इसलिए राजपूतों के खिलाफ दुष्प्रचार करना शुरू किया। इन सत्ताधारियों ने राजपूतों को शोषक, सामन्तवादी, दुराचारी, अत्याचारी और न जाने क्या-क्या कहकर आम जनता में राजपूतों के खिलाफ घृणा पैदा की। कहते हैं कि सौ बार झूठ बोल दिया जाए तो वह भी सत्य हो जाता है और सत्ता के लालायित इन बुद्धिजीवियों ने बार-बार झूठ बोलकर राजपूतों के खिलाफ आम लोगों में नफरत पैदा की, घृणा का जहर फैलाया और इसमें वे बहुत हद तक सफल भी रहे। जबकि असलियत यह है कि भारतवर्ष में हिन्दुत्व बचा है तो केवल राजपूतों की वजह से। सबको साथ लेकर चलने वाली राजपूत जाति ने हर जाति-समाज को संरक्षण दिया है, उनके हितों के लिए यह जाति सदैव लड़ती रही है।

पूज्य श्री तनसिंह जी ने वास्तविक, जमीनी हकीकत बतायी कि जाट और राजपूत दोनों खेतिहर कौम हैं। वर्षो से गाँवों में साथ-साथ रहती आई है। एक इस खेत में बैठकर कांदा-रोटी खाता है, तो एक उस खेत में। दोनों की समस्याएँ समान हैं और परिस्थिति समान हैं तो ऐसे में संघर्ष क्यों? लेकिन बुद्धिवादी ताकतें इनके बीच में खाई पैदा करने में सफल रही और यह खाई बनी रहे एवं बढ़ती रहे इसके लिए प्रयासरत है।

महापुरुष सदैव जोड़ने का काम करते हैं, न कि

तोड़ने का और पूज्य श्री तनसिंह जी ने भी अपने जीवन काल में सदैव जोड़ने का ही काम किया। श्री क्षत्रिय युवक संघ इसका साक्षात उदाहरण है। छठी लोकसभा के सदस्य रहते पूज्य श्री के समक्ष राजनीतिक उठा-पटक में एक घटना घटी जिसमें जोड़ने और तोड़ने का घटनाक्रम चला। इस घटनाक्रम में पूज्य श्री -ने तो जोड़ने का ही काम किया।

छठी लोक सभा में मोरारजी देसाई की सरकार थी लेकिन राजनीतिक उठा-पटक में मोरारजी देसाई की सरकार गिर गई। मोरारजी देसाई के इस्तीफे के बाद तत्कालीन गृहमंत्री चौधरी चरणसिंह ने कांग्रेस के समर्थन से सरकार बनाने का दावा पेश किया। आपातकाल के बाद विभिन्न विचारधारों के संयुक्त विपक्ष से गठित जनता पार्टी बिखर गई। जिन्होंने एक साथ मिलकर चुनाव लड़ा था, वे ही एक-दूसरे के विरोधी हो गए। ऐसे में जनता पार्टी के बैनर तले चुनाव लड़े सांसदों का समर्थन माँगने के लिए चौधरी चरणसिंह के लोगों ने सम्पर्क करना प्रारम्भ किया। चौधरी चरणसिंह भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के मौलिक चिंतक थे एवं उनका जीवन बहुत सादा था। पूज्य श्री को उनकी मौलिकता एवं सादगी पसंद थी। साथ ही आजाद भारत के इतिहास में पहली बार बुद्धिवादी शहरी वर्ग की अपेक्षा मौलिक ग्रामीण चिंतन वाला व्यक्ति प्रधानमंत्री बनने जा रहा था। साथ ही जाट राजपूत के नाम पर पैदा की गई खाई को पाटने की पहल करने का भी यह अवसर था। पूज्य श्री उस लोकसभा में राजस्थान से चुने गए एकमात्र राजपूत सांसद थे। राजस्थान से ही सांसद कुंभाराम आर्य एवं दौलतराम सारण चरणसिंह जी के प्रतिनिधि बनकर पूज्य श्री से मिलने जोधपुर आए एवं चरणसिंह के लिए समर्थन माँगा। पूज्य श्री ने सहर्ष अपना समर्थन देने का वादा किया एवं अपनी जोड़ने वाली सोच प्रकट की। पूज्य श्री ने इस अवसर का उपयोग अपनी सोच को क्रियात्मक रूप दे

धरातल पर लाने के लिए किया। हालांकि कालांतर में कांग्रेस द्वारा समर्थन वापसी के कारण वह सरकार भी गिर गई लेकिन पूज्य श्री ने एक नजीर पेश की कि समान परिस्थिति वाली कौमों को अपने बीच पनपी नकारात्मकता को प्रचारित करने की अपेक्षा उन बिन्दुओं को, उन समानताओं को खोजने का प्रयास करना चाहिए जो निकट ला सके। साथ ही अवसर मिलने पर इन समानताओं को प्रचारित करना चाहिए, उनको व्यवहार में लाने का उद्यम भी करना चाहिए। पूज्य श्री की यह सोच दोनों समाजों में कितनी प्रसारित हो पाई, कितनी प्रभावी बन पाई और समाजों ने इसका कितना अनुसरण किया, यह अलग विषय है, लेकिन पूज्य श्री ने सफलता-असफलता की चिन्ता किये बगैर अपना दायित्व पूरी ईमानदारी से निभाकर सबके सामने एक नजीर पेश की। उन्होंने अपना दायित्व निर्वहन किया और उनका यह दायित्व निर्वहन हम सभी जागरुक लोगों के लिये प्रेरणा बन जाए, यह जागरुकता हमारे अन्त:करण में अवतरित हो जाए यही परमेश्वर से हमारी विनती है। **(क्रमश:)**

भागने का कोई रास्ता न खुला हो तो मनुष्य डटकर संघर्ष करता है और उसके संकल्प में अटूट दृढ़ता आ जाती है। वह घोर कठिनाई, असह्य कष्ट को भी सहन करता है।

जूलियस सीजर ने अपनी सेना को हार कर भागने से बचाने के लिये जहाजों को आग लगा दी, जिससे सैनिकों के भागने का रास्ता बन्द हो गया और सैनिकों ने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया। ●

युग पुरुष पूज्य श्री तनसिंह जी

– सुमेरसिंह गुड़ा

श्री क्षत्रिय युवक संघ के भाव का अंकुरण सन् 1944 की दीपावली के दिन पिलानी, जिला-झुन्झुनू में हुआ। दीपावली की रात में जब पूरा देश दीपक जलाकर, फटाके छोड़ कर खुशियाँ मना रहा था, तब राजपूत छात्रावास पिलानी के एक कमरे में पू. तनसिंह जी के यह चिंतन चल रहा था कि मेरे सामाजिक जीवन में प्रकाश कैसे उदय हो? मेरा समाज अपने गौरवशाली अतीत की राह पर कैसे चले? समाज में सामाजिक प्रकाश फैले वैसा दीपक क्या हो? इसी चिंतन में एक संकल्प जगा कि समाज में मार्गदर्शन का दीपक जलाना है। यही श्री क्षत्रिय युवक संघ के भाव का अंकुरण था।

उस समय चलने वाली संस्थाओं की तरह ही अधिवेशन बुलाना, प्रस्ताव पारित करना आदि कार्य श्री क्षत्रिय युवक संघ में प्रारम्भ हुए। इसका पहला अधिवेशन जोधपुर में तथा दूसरा अधिवेशन काली-पहाड़ी जिला-झुंझुनू में हुआ। लगभग दो वर्ष तक यह चलता रहा पर पू. तनसिंह जी को इससे समाज जागृति के अपने स्वप्न की पूर्ति होती हुई नहीं नजर आई। इसलिए उन्होंने 21 दिसम्बर, 1946 को अपनी कार्यकारिणी को मलसीसर हाउस, जयपुर में बुलाया। दो दिन में विचार-विमर्श के बाद वर्तमान कार्यप्रणाली से श्री क्षत्रिय युवक संघ को भविष्य में संचालित करना स्वीकार किया गया। 22 दिसम्बर, 1946 से संघ की विधिवत स्थापना हुई। तनसिंह जी को इसके संघप्रमुख का दायित्व सौंपा गया। 25 दिसम्बर से जयपुर में ही पहला शिविर आयोजित हुआ जिसके शिक्षण, सहयोग व अनुशासन से आत्मविश्वास और अधिक सुदृढ़ हुआ और संघ कार्य ने गति पकड़ी।

राजपूताना, राजस्थान प्रदेश बन चुका था। 1952 में प्रथम विधान सभा चुनाव तय हो चुके थे। पू. तनसिंह जी बाड़मेर नगरपालिका के अध्यक्ष थे और बाड़मेर क्षेत्र में अच्छा प्रभाव था। जोधपुर महाराजा ने उन्हें बाड़मेर से विधानसभा चुनाव का प्रत्याशी बनाया। वे चुनाव जीत गये। उनकी विलक्षण कार्यक्षमता से संघ का भाव समाज में बढ़ता जा रहा था। 1954 में पू. आयुवान सिंहजी को संघ का संघप्रमुख बनाया गया। 1955 में काश्तकारी अधिनियम का काला कानून लागू किया गया जिसमें विक्रम संवत् 2012-13 में भूमि में काश्त करने वाले किसान को भूमि का मालिक, माना गया। अचानक ऐसे कानून के लागू होने से भूमि मालिक हत्प्रभ रह गये। त्याग व बलिदान से प्राप्त उनकी जागीर व भूमि एक ही झटके में छीन ली गई। असंतोष व विद्रोह पैदा हुआ। नेतृत्व-हीनता के कारण समाज में निराशा के काले बादल छाए। तब श्री क्षत्रिय युवक संघ ने इस कानून के खिलाफ आंदोलन का बीड़ा उठाया। 1955 व 1956 में दो भू-स्वामी आन्दोलन अहिंसात्मक रूप से संचालित हुए। सरकार को समझौता करना पड़ा। 1958 में भू-स्वामियों के ग्रामीण शिविर भी लगे। आन्दोलन के प्रभाव से समाज को राहत मिली। नहरी क्षेत्र में भूमि आंवटित हुई। मुआवजा बढा। नौकरियों में उम्र में छूट मिली।

पूज्य श्री तनसिंह जी को तथा उनके साहित्य को समझना साधारण बात नहीं है। उन्होंने संघ के माध्यम से समाज को अपना उत्तरदायित्व समझाने में सहयोग किया। उनकी संघर्षपूर्ण सक्रियता ने समाज को संस्कारित करने का मार्ग संघ को बनाया। संघ की शाखाओं व शिविरों से स्वयंसेवकों के जीवन में निरंतर निखार आता जा रहा है। वे दिव्य पुरुष थे। समाज व राष्ट्र के प्रति उनके हृदय में अपार स्नेह था, इसीलिए वर्तमान पतनावस्था की पीड़ा थी। उन्होंने उच्च कोटि के साधकों का निर्माण श्री क्षत्रिय युवक संघ के माध्यम से किया। उन्होंने समझाया कि अपने आपको बनाये बिना समाज जागरण करना संभव

(शेष पृष्ठ 34 पर)

श्री क्षत्रिय युवक संघ ही क्यों?

– गिरधारी सिंह डोभाड़ा

हमारे धर्म शास्त्र कहते हैं कि भगवान ने इस सारी सृष्टि की रचना की है। जड़ और चेतन जो भी दृश्यमान हैं और अदृश्य हैं, वे सारे ही भगवान के, परमेश्वर के रचे हुए हैं। इनकी रचना के पीछे परमेश्वर का क्या उद्देश्य रहा है, वह तो परमेश्वर ही जाने, पर हमारे ऋषि-मुनियों ने कहा है कि बिना उद्देश्य के कुछ भी किया नहीं जाता है। इसलिए इस सृष्टि की रचना के पीछे ईश्वर का कोई उद्देश्य तो है ही।

मनुष्य की रचना के सम्बन्ध में भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है-'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः।' इस प्रकार भगवान को मनुष्य की रचना की और मनुष्य के गुण और स्वभाव के अनुसार उनके कार्य निश्चित किए तथा उनकी चार श्रेणियाँ बनाई, उनको चार वर्णों में विभाजित किया। मनुष्य के गुण और स्वभाव के अनुसार उनके कर्म भी चार नियत किये। जिस मनुष्य का स्वभाव मन का शमन करना, इन्द्रियों का दमन करना, पवित्रता (मन, वाणी, शरीर की), तप करना, ज्ञान (ब्रह्मज्ञान) प्राप्त करना और देना, क्षमा और दया का भाव रखना, ऐसे सात्विक गुण-स्वभाव के मनुष्य के लिए ब्रह्म कर्म नियत किया जो ब्राह्मण वर्ण का कहा गया,-

शमो दमस्तप: शौचं क्षान्तिरार्जनवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रहा कर्म स्वभावजम्।।

जिस मनुष्य का स्वभाव शूरवीरता, देवी तेज, धैर्य, दक्षता (कार्य में), कार्य से (नियत कर्म से), संघर्ष से पलायन न करना, दान देना व ईश्वरीय भाव है उसे क्षत्रिय वर्ण में रखा गया और उसका कार्य 'परित्राणाय साधूनाम्' नियत किया गया।

कृषि, गोपालन (पशुपालन), व्यापार जैसे कर्म करने का जिसका स्वभाव है उसे वैश्य वर्ण में और जो मनुष्य अपनी बुद्धि, कौशल जैसे गुण स्वभाव से अन्य वर्णों की सेवा का गुण रखता हो उसे शूद्र वर्ण में रखा गया।

भगवान द्वारा रचे गये चारों वर्णों में कोई छोटा या बड़ा नहीं है। चारों वर्ण एक दूसरे के पूरक हैं। एक दूसरे के सहयोगी हैं। इनमें कोई भेदभाव नहीं है। क्षत्रिय के गुण की श्रेष्ठता भी बहुचर्चित है क्योकि 'क्षतात त्रायते इति क्षत्रिय' जो क्षय से, नाश से बचाता है, रक्षण करता है, वही क्षत्रिय। किसी को नाश से बचाना है तो जिससे बचाना है उससे संघर्ष करना पड़ता है, उसके साथ युद्ध करना पड़ता है। सामने वाला प्रतिद्वन्द्वी अधिक शक्तिशाली हो तो अपने आपका बलिदान भी देना पड़ता है, प्राणों का उत्सर्जन भी करना पड़ता है। अन्य किसी के लिए अपने प्राणों का उत्सर्जन करना कोई आसान बात नहीं है। क्योंकि हर प्राणी जिन्दा रहना चाहता है। लम्बे जीवन की जिजीविषा होती है। क्षत्रिय का प्रतिद्वन्द्वी कौन होता है? वही जो तामसिक प्रकृति का होता है। तामसिक वृति हमेशा सात्विक वृति से अधिक शक्तिशाली होती है, वह अधिक तादाद में भी होती है क्योंकि उसकी प्रकृति ढलान की होती है, अधोगामी होती है। ऊर्ध्वगामी से अधोगामी प्रवृति में आकर्षण अधिक होता है। क्योंकि वह श्रेय की बजाय प्रेय की होती है। प्रेय से श्रेय का मार्ग कठिन होता है, संघर्षपूर्ण होता है; इसलिए श्रेय का मार्ग अपनाने वालों को सामर्थ्यवान होना पड़ता है। 'शक्ति शौर्य जो पास नहीं, तो विजय नहीं जयकारों में।' अन्य वर्णों के लिए जो नियत कर्म है वह इतना कठिन या संघर्षपूर्ण नहीं है, जितना की क्षत्रिय का नियत कर्म कठिन है। इसी कारण क्षत्रिय को श्रेष्ठ कहा गया है।

जहाँ तक, जब तक क्षत्रिय अपने स्वधर्म पालन में दक्ष रहा, संसार में, समाज में उसकी मांग बनी रही। महाभारत काल के आने तक क्षत्रियों ने अपने स्वधर्म का पालन ईश्वरीय भाव के साथ दक्षतापूर्वक किया। महाभारत काल से ही क्षत्रियों ने अपने स्वधर्म पालन में चूक करना

प्रारम्भ कर दिया। भले ही वह जाने-अनजाने में हो, अपने अहं, स्वार्थ, वचन और प्रतिज्ञा पालन के नाम से या बहाने से। इसका अनुसरण अन्य वर्णों ने भी किया। मानव स्वभाव का यह नियम रहा है, यह स्वाभाविक आचरण रहा है, व्यवहार रहा है कि जैसा एक प्रतिष्ठित व्यक्ति तथाकथित समझदार व्यक्ति आचरण करता है, उसी का वे अनुसरण करते हैं। भले ही उस प्रतिष्ठित व्यक्ति का आचरण सात्विक हो या तामसिक, धर्माभिमुख हो या धर्म विरुद्ध। महाज्ञानी, महाशक्तिशाली, अतिरथी, इच्छा मृत्यु का वरदान पाने वाले, कुरुकुल श्रेष्ठ भीष्म पितामह हस्तिनापुर के सिंहासन की रक्षा और उस सिंहासन पर बैठने वाले के प्रति वफादार रहने की प्रतिज्ञा को आगे रखकर अपने ही कुल की कुलवधु को भरी सभा में अपमानित होते देखते रहे। क्षत्रिय कुल में जन्म मिला होते हुए भी 'परित्राणाय साधूनाम्' का पालन नहीं किया। इनका ही अनुकरण महासमर्थ आचार्य द्रोण और कृपाचार्य ने भी किया क्योंकि वे दुर्योधन का अन्न खाते थे। महारथी और दानेश्वर कहलाने वाले कर्ण, वचन-पालक कर्ण ने सती द्रौपदी को भरी सभा में वेश्या कहकर उसका अपमान किया। कालान्तर में उन महापुरुषों के गैर जिम्मेदारी पूर्ण वर्तन का इतना अनुकरण हो रहा है कि आज तो असंख्य द्रौपदियाँ निर्वस्त्र की जा रही हैं और उनको वेश्या भी कहा जा रहा है, लेकिन उनके पक्ष में खड़ा होने वाला कोई क्षत्रिय नहीं है। कर्तव्यच्युत उन क्षत्रियों का अनुसरण आज पूरा संसार कर रहा है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अध्याय-3 के श्लोक 22, 23, 24 में कहा है-

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि।। -22

अर्थात् हे पार्थ! मुझे इन तीनों लोकों में न तो कुछ कर्तव्य है और न कोई प्राप्त करने योग्य वस्तु अप्राप्त है, तो भी मैं कर्म में ही बरतता हूँ। क्यों?

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।। -23

क्योंकि यदि कदाचित मैं सावधान होकर कर्मों में न बरतूं तो बड़ी हानि हो जाय; क्योंकि मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते हैं। आगे कहते हैं-

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्।
सङ्करस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः।। -24

इसलिए यदि मैं सावधान होकर कर्म न करूं तो सब मनुष्य नष्ट-भ्रष्ट हो जाएँ और मैं वर्णसंकरता करने वाला हो जाऊँगा और इस समस्त प्रजा को नष्ट करने वाला बन जाऊँगा।

यहाँ वर्णसंकर कोई भिन्न वर्ण के स्त्री-पुरुष से उत्पन्न सन्तान की बात नहीं है, बल्कि भिन्न वर्ग के स्वधर्म को अपनाना, उनके नियत कर्म को करना है। अपने स्वधर्म को छोड़कर दूसरे के धर्म का पालन करना ही वर्णसंकरता है। अपने स्वभाव से किया गया कर्म ही कल्याणकारी है। दूसरे के स्वभाव-गुण और उसके सामर्थ्य को देखकर बिना उस प्रकार के स्वभाव-गुण और सामर्थ्य के हम वह कर्म करेंगे तो वह अकल्याणकारी ही होगा। जिस व्यक्ति ने हिन्दी के विषय में एम.ए. किया हो और वह विज्ञान का विषय पढाने जाए तो क्या होगा? यही कि वह पढ़ा नहीं सकेगा और उस नौकरी के लिए वह अयोग्य करार दे दिया जाएगा। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में यह भी कहा है-

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।। -35
श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वभाव नियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्विषम्।। 18-47

भगवान श्रीकृष्ण तीसरे अध्याय के 35वें श्लोक में स्पष्ट कहते हैं कि, अच्छी तरह आचरण किये हुए दूसरे के धर्म से भले ही अपना स्वधर्म गुण रहित हो तब भी अपना स्वधर्म उत्तम है। अपने स्वभाव से उत्पन्न कर्म में मरना भी श्रेयस्कर है। भगवान आगे 18वें अध्याय के 47वें श्लोक में कहते हैं कि गुण रहित स्वधर्म श्रेष्ठ है क्योंकि स्वभाव से नियत हुआ कर्म करने वाले व्यक्ति को दोष नहीं लगता, उसे कोई पाप नहीं लगता। जैसे देश, धर्म, सत्य की रक्षा

के लिए सैनिक दुश्मन को मारता है तो भी वह गुनहगार नहीं होता बल्कि उसका सम्मान किया जाता है। मानव हत्या पाप है लेकिन वह मानव यदि देश, धर्म, सत्य का दुश्मन है तो उसको मारना सैनिक के लिए नियत कर्म है।

ब्राह्मण यानी जो ब्रह्मज्ञानी है, जैसे हमारे ऋषि-मुनि वशिष्ट, कश्यप, विश्वामित्र इत्यादि। इनका स्वाभाविक गुण है मन का शमन, पवित्रता, ज्ञान, दया, क्षमाभाव इत्यादि। तप और ज्ञान दान उनका मुख्य कर्म था। उन ऋषि-मुनियों के यज्ञ-तप में राक्षस विक्षेप डालते थे फिर भी उन ऋषि-मुनियों ने शाप देकर या तप की शक्ति से उन्हें भस्म नहीं किये थे। विविध शस्त्र एवं दिव्यशस्त्रों के ज्ञाता होते हुए भी उन्होंने उन राक्षसों या आततायियों पर शस्त्र नहीं उठाए थे और क्षत्रियों के द्वारा ही उनका नाश करवाया था। विश्वामित्र ने अपने यज्ञों की रक्षा क्षत्रिय युवक राम और लक्ष्मण के द्वारा ही करवाई थी। हालांकि विश्वामित्र ने ही दिव्य शस्त्रों का ज्ञान राम और लक्ष्मण को दिया था। विश्वामित्र अपने तप के प्रभाव से राक्षसों का नाश करते तो उनकी तपस्या की शक्ति नष्ट हो जाती और वे ब्रह्मर्षि नहीं रह पाते। इसलिए उन्होंने यह कार्य क्षत्रियों से करवाया। विश्वामित्र तब ब्रह्मर्षि थे। उनका स्वभाव और गुण ब्राह्मण के थे। उन्होंने अपने क्षत्रिय स्वभाव पर संयम रखा। अपने बोध का दमन किया और उन राक्षसों का संहार क्षत्रिय राजकुमारों, राम और लक्ष्मण द्वारा ही करवाया। यदि वे स्वयं क्षत्रिय का कार्य करते तो वे न ब्रह्मर्षि रहते और न क्षत्रिय हो पाते और दोनों में से कोई भी कर्म उनके लिए श्रेयस्कर न होता। इसलिए हर एक मनुष्य के लिए उसके गुण, कर्म, स्वभाव से जो नियत कर्म है, वही उसका स्वधर्म है और उसका पालन करना ही उसके लिए श्रेयस्कर है, भले ही वह अप्रेय हो।

द्वापर युग तक व्यक्ति अपने स्वधर्म का पालन करते रहते थे लेकिन महाभारत काल से मनुष्य अपने स्वधर्म का पालन पूर्ण रूपेण न करके अन्य के स्वधर्म का पालन करने लगे और संसार में अन्याय तथा अराजकता फैलने लगी। आचार्य द्रोण, कृपाचार्य जैसे महान् ज्ञानी आचार्यों ने कुरु कुल के राजकुमारों कौरव और पाण्डवों को अस्त्र-शस्त्र की और क्षत्रिय धर्म की शिक्षा तो दी लेकिन वे स्वयं न ब्राह्मण धर्म निभा सके और न क्षत्रिय धर्म अपना सके। दोनों ही आचार्यों और अश्वस्थामा ने अन्न के दास होकर अधर्म का आचरण करने वाले दुर्योधन, कौरवों का पक्ष लिया। वे तीनों ही अस्त्र-शस्त्र में निपुण थे, महारथी थे, उन्होंने कई बार शस्त्र उठाए, महाभारत के युद्ध में उन्होंने अदम्य पराक्रम दिखाया फिर भी उनका पक्ष विजय नहीं पा सका क्योंकि उन्होंने अधर्म का पक्ष लिया था। उनका पक्ष न 'क्षतात त्रायते' का था और न ही 'परित्राणाय साधूनाम्' का था। वे तीनों जन्म से भले ही ब्राह्मण कुल के हों लेकिन कर्म से न ब्राह्मण रह पाये और न क्षत्रिय ही बन पाये। कालान्तर में लोगों ने इन महान योद्धाओं का अनुसरण किया कि अहं, स्वार्थ के कारण या अर्थ के लालच में आकर और राज्याश्रित होकर ऊँचे-ऊँचे पद पाकर, स्वधर्म का पक्ष छोड़कर अधर्म का पक्ष लिया। अनेक राजाओं ने भी संकट आने पर संघर्ष की राह छोड़कर सुविधा की राह पकड़ी। परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे क्षत्रिय अपने कुल धर्म को, अपने स्वधर्म को भूला बैठे और सातवीं शताब्दी तक अपनी पहचान क्षत्रिय नाम से छोड़कर राजपूत संज्ञा बना ली। आज तो क्षत्रिय संज्ञा अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए भी अपनाई जा रही है।

मध्यकालीन इतिहास राजपूत युग अवश्य कहा गया है। इस युग में कई राजपूत वीरों ने इतिहास में अपना स्थान बनाकर राजपूत जाति को गौरव अवश्य दिलवाया है। वीरता में उनका कोई सानी नहीं है। सिर कटने पर भी धड़ लड़ता रहा है। उनकी वीरता अद्वितीय, अकल्पनीय और अलौकिक थी। इस युग का शिल्प-स्थापत्य, साहित्य, चित्रकला, संगीत, नृत्य आदि क्षेत्रों में सांस्कृतिक विकास आज भी सराहनीय रहा है और विदेशी पर्यटकों के लिए दर्शनीय केन्द्र है। इतना कुछ होते हुए भी, इतना सांस्कृतिक निर्माण करते हुए भी यूरोपीय इतिहासकार और तथाकथित

बुद्धिजीवी वर्ग, जो अपने आपको ज्ञानी और विद्वान मानते हैं, वे लोग राजपूतों को भारत के मूल निवासी नहीं मानते हैं। इनकी नजरों में तो राजपूत बाहर से आक्रमण करने वाली जंगली, क्रूर व बर्बर जाति के वंशज हैं जो मूल भारतीय सुसंस्कृत प्रजा में घुल-मिल गये हैं। क्या कहना इन तथाकथित ज्ञानी और विद्वानों के ज्ञान का? इन लोगों ने राजपूतों के गौरव को मिटाने का हीन कृत्य किया है और आज भी उनका प्रयत्न जारी है।

अंग्रेजी शासन के दौरान राजा, महाराजा, जागीरदार, कुछ साधन सम्पन्न राजपूतों ने अंग्रेजी शिक्षा पाकर राजपूतों के उत्थान के लिए कुछ संस्थाएँ स्थापित की। जैसे अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा, राजपूत सभाएँ, राजपूत हितकारिणी सभाएँ इत्यादि। इन सभी संस्थाओं का उद्देश्य भी कुछ भिन्न-भिन्न था। कोई संस्था शिक्षा के प्रसार को लेकर, कोई समाज में फैले कुरिवाजों को लेकर, कुछ राजनीति को लेकर कार्य करने लगी थी। उद्देश्य की दृष्टि से न उनमें कोई समानता थी न उनकी कार्यप्रणाली भी वैज्ञानिक थी। उनके सदस्यगण और नेतृत्व भी निजी महत्त्वाकांक्षा और अहंकार में उलझे थे। फलत: कुछ संस्थाएँ रही नहीं और कुछ संस्थाएँ नाममात्र की शेष रही हैं।

सन् 1940 के दशक में देश प्राची में स्वतंत्रता के सूर्योदय की लाली देख आशातीत था। किशोर विद्यार्थी तणेराज, तनसिंह को विश्वास और आनन्द तो था कि देश अंग्रेजी शासन से तो मुक्त हो जाएगा, देश में प्रजातंत्र भी स्थापित होगा, पर मेरी कौम का भविष्य क्या होगा? मेरी कौम के गौरव की रक्षा कैसे होगी? किशोर श्री तनसिंह जी कौम की वर्तमान स्थित से चिंतित थे। वे सोचते थे हो सकता है स्वतंत्र भारत में कुछ क्षत्रियों को राज्य सत्ता में स्थान मिले, कुछ लोगों को प्रशासन में उच्च पद मिले, कुछ लोग व्यापार-धंधा करके संपत्तिवान बन जाएँ। लेकिन कौम को अपने पूर्वजों से प्राप्त वह गौरव पुन: कैसे प्राप्त होगा? वह तो कौम को अपनी उपयोगिता सिद्ध करने से ही मिल सकता है। वह उपयोगिता तो क्षत्रियोचित कर्म से ही प्राप्त हो सकती है। क्षत्रियोचित कर्म कैसे किया जा सकता है? जब क्षत्रियोचित गुण हों, क्षत्रियोचित स्वाभाव हो। क्षत्रियोचित गुण व स्वभाव क्षत्रियोचित संस्कारों से ही निरुपित और विकसित हो सकते हैं। इसके लिए निरंतर अभ्यास करना पड़ता है। अभ्यास का महत्त्व बताते भगवान श्री कृष्ण ने भी कहा है कि निरंतर अभ्यास से ही मन की चंचलता को स्थिर किया जा सकता है।

शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत।।

क्षत्रिय के गुणों (गीता अध्याय 18, श्लोक 43) का निरंतर, नियमित अभ्यास और आत्मावलोकन करते रहने से ही क्षत्रिय क्षत्रियत्व प्राप्त कर सकता है। उसे क्षत्रियत्व प्राप्त करके केवल स्वधर्म, क्षात्रधर्म पालन की कामना करनी चाहिए क्योंकि क्षत्रिय के लिए स्वधर्म पालन में ही चारों पुरुषार्थ, अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। 'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं, जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।'

इसी विचारधारा से, स्वधर्म पालन के इसी दर्शन को लेकर पूज्य श्री तनसिंह जी ने सन् 1944 में बीज बोया जो 22 दिसम्बर, 1946 को वर्तमान रूप में अंकुरित हुआ- श्री क्षत्रिय युवक संघ। श्री क्षत्रिय युवक संघ का एक ही उद्देश्य है- सर्वगुण सम्पन्न और चारों पुरुषार्थों को प्राप्त करवाने वाला, शाश्वत, सनातन, सर्वहितकारी, न्याय, नीति, सत्य, ज्ञान का रक्षक क्षात्रधर्म। ध्येय महान हो तो मार्ग भी महान होना चाहिए। मार्ग का मतलब है कार्य पद्धति। श्री क्षत्रिय युवक संघ का मार्ग है सामूहिक संस्कारमयी कार्यप्रणाली। यह कार्यप्रणाली वैज्ञानिक है, यानी कि यह निरंतर, नियमित और सामूहिक रूप से चलने वाली है।

क्षत्रियोचित संस्कारों का सिंचन बालक, बालिकाओं, युवाओं, युवतियों में निश्चित स्थान पर शाखा के रूप में निरंतर और नियमित किया जाता है। शिविरों के माध्यम से किया जाता है। शाखा और शिविर क्षत्रिय युवक संघ की निरन्तर चलने वाली पाठशालाएँ हैं। प्रेरक कैसा

है? प्रेरक भी महान् और शाश्वत है, शौर्य, त्याग और बलिदान का प्रतीक एवं प्रेरक केशरिया ध्वज। ध्वज कैसे प्रेरक हो सकता है? ध्वज श्री क्षत्रिय युवक संघ का मार्गदर्शन करता है क्योंकि उसमें न कोई निज की आकांक्षा है, और न अहं है। संघ के शिक्षक या कार्यकारी पूज्य केशरिया ध्वज को अपना अधिष्ठाता मानकर उसके दीवान के रूप में काम करते हैं। उनकी न कोई निजी आकांक्षाएँ होती और न कोई पद प्राप्ति की कामना होती है। उनके जिम्मे जो कार्य आता है उसको वे अपने हृदय के पवित्र भाव के साथ, पूरी निष्ठा के साथ करते हैं। अनुशासन श्री क्षत्रिय युवक संघ की आधारशिला है। श्री क्षत्रिय युवक संघ में कोई जाति, उपजाति नहीं है। श्री क्षत्रिय युवक संघ चारों वर्णों में समता रखता है। 'सहयोगी जीवन के सपने मूर्त हुए रे स्वर्ग यहीं है।' ऐसा सहयोगी भाव पनपता है श्री क्षत्रिय युवक संघ में। संघ सभी धर्मों और सम्प्रदायों का समान रूप से आदर-सम्मान करता है। तभी तो 22 दिसम्बर सन् 2021 को भवानी निकेतन प्रांगण जयपुर में तथा 28 जनवरी, 2024 को जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम दिल्ली में जन-सैनाब उमड़ पड़ा था।

श्री क्षत्रिय युवक संघ व्यक्ति, जाति, संप्रदाय, काल, परिस्थिति के सापेक्ष नहीं है बल्कि शाश्वत संगठन करने निकला है। इसीलिए तो एकमात्र निराला सर्व श्रेयस्कारी है-श्री क्षत्रिय युवक संघ। वर्तमान में तो श्री क्षत्रिय युवक संघ के जीवन दर्शन के समान किसी संस्था का दर्शन नहीं है। श्री क्षत्रिय युवक संघ का कोई विकल्प नहीं है। ●

तर्क शास्त्र का प्रादुर्भाव

महर्षि उतथ्य मृगार्जिन पर बैठे वेद मंत्रों का उच्चारण करते हुए सामने स्थित हवन कुण्ड में घी डाल रहे थे कि एक हिरन भागता हुआ वहाँ आया और उनकी कुटिया में जा घुसा। थोड़ी देर में एक शेर भी वहाँ आया और उसने महर्षि से पूछा-''गुरुदेव! क्या आपने मेरे शिकार को यहाँ से जाते हुए देखा है?''

महर्षि उतथ्य बड़े ही असमंजस में पड़ गये। वे सत्यवादी थे तथा उन्होंने असत्य वचन कभी नहीं कहे थे। आज उनके सामने एक विकट समस्या उपस्थित हो गयी। असत्य बोलना उनकी दृष्टि में महान् अपराध था और सत्य बोलने से शरण में आये एक निर्दोष प्राणी को जानते हुए उसके भक्षक को सौंपने से उनके द्वारा महापातकी कर्म होने वाला था। उनकी समझ में ही न आया कि वे उसे क्या जवाब दें। उस शेर ने पुन: प्रश्न किया-''गुरुदेव! आप मुझे वह हिरन किस दिशा की ओर गया है, यही दिखा दें तो मैं आपके प्रति कृतज्ञ रहूँगा।''

सहसा महर्षि के मुख से उद्‌गार निकले,-''हे वनराज! मैं तुझे कैसे और किस तरह दिखाऊँ? क्योंकि देखने का कार्य आँखें करती हैं, जबकि बोलने का कार्य मुख द्वारा होता है। आँखें बोल नहीं सकती और मुख देख नहीं सकता। तू बोलने वाली इन्द्रिय से प्रश्न कर रहा है कि क्या उसने तेरा शिकार देखा है? जो देख नहीं सकता वह इसका क्याजवाब दे सकता है? इसी तरह जिसने देखा है वह भला बोल कैसे सकता है? ऐसी परिस्थिति में मैं तेरे प्रश्न का जवाब देने में असमर्थ हूँ।''

उस शेर को अपने शिकार का सही-सही ठिकाना न मालूम होने से वह तो लौट गया, किन्तु महर्षि के मुख से निकले शब्दों से एक नये शास्त्र का प्रादुर्भाव हुआ, जिसका नाम है- **तर्कशास्त्र**।

संकल्प की शक्ति

– आचार्य महाप्रज्ञ

मनुष्य बदलता है, चेतना बदलती है। उसका एक शक्तिशाली माध्यम है-संकल्प-शक्ति। आज तक जो विकास हुआ है उसमें संकल्प-शक्ति का बड़ा योगदान रहा है। आदिकाल से आज तक मनुष्य ने जितनी घाटियां पार की हैं, जो नहीं था उसे प्राप्त किया, जितना विकास किया है, उसमें संकल्प-शक्ति का बड़ा योगदान रहा है। संकल्प-शक्ति के सहारे वह बदलता गया, बदलता गया। उसके शरीर का आकार बदला है, प्रकार बदला है, इन्द्रियाँ बदली हैं, चेतना बदली है। पूरा विकास होता गया है। इच्छाशक्ति, संकल्प शक्ति और एकाग्रता की शक्ति-ये तीन हमारी बड़ी शक्तियाँ हैं। ये तीन मनुष्य की दुर्लभ विशेषताएँ हैं और इन शक्तियों के आधार पर ही आज के विकास के बिन्दु पर पहुँचे हैं। संकल्प-शक्ति हमारी बहुत बड़ी शक्ति है।

संकल्प-शक्ति का अर्थ है-कल्पना करना और उस कल्पना को भावना का रूप देना, दृढ़ निश्चय करना। जब हमारी कल्पना उठती है और वह कल्पना दृढ़ निश्चय में बदल जाती है तो हमारी कल्पना संकल्प शक्ति बन जाती है। पहले-पहल कल्पना उठती है, ऐसा हो सकता है, ऐसा होना चाहिए । यह हमारी कल्पना है। कल्पना में इतनी ताकत नहीं होती, उसमें इतना बल नहीं होता। जब कल्पना की पुट लगती है, उसकी ताकत बढ़ जाती है।

दूसरी बात-व्रत की शक्ति का विकास। भारतीय सभ्यता और संस्कृति में व्रत का बहुत बड़ा महत्त्व था। हर धर्म ने व्रत की शक्ति का विकास किया था। व्रतों का बड़ा महत्त्व हुआ। सबने व्रतों का विधान किया और सब लोग व्रतों को स्वीकार करते। यहाँ 'दीक्षा' शब्द बहुत प्रचलित रहा। दीक्षा का अर्थ ही था-व्रतों का स्वीकार। यज्ञोपवीत से लेकर विभिन्न संस्कारों में, सन्यास में, मुनित्व में, कहीं भी कोई जाये, व्रत का विधान उसके लिए होता था। आज वह व्रत का विधान भी छूट गया। व्रत की शक्ति भी कम हो गई।

संकल्प-शक्ति के विकास के लिए तीसरा उपाय है- नियमितता। आप एक छोटा-सा प्रयोग करें। आपका इष्ट मंत्र अलग-अलग हो सकता है। मैं आपको कोई मंत्र नहीं बताऊँगा। जो आपका इष्ट हो और जिस पर आपका विश्वास हो, उसका आप एक निश्चित स्थान में, निश्चित समय में प्रतिदिन जाप करें। एक वर्ष प्रयोग करके देखें कि आपकी संकल्प-शक्ति कितनी बढ़ जाती है। ठीक वही समय और वही स्थान। निश्चित देश और निश्चित काल। उसका प्रयोग करें तो स्वयं अनुभव होगा कि मेरी आन्तरिक शक्ति, क्षमता और संकल्प-शक्ति कितनी बढ़ गई। जो सोचता हूँ वही कर लेता हूं यह वचन-सिद्धि का बहुत बड़ा उपाय है। वचन-सिद्धि का अर्थ है कि मुँह से जो बात निकल जाती है वह बात हो जाती है। यह वचन-सिद्धि का बहुत सुन्दर उपाय है कि तीन वर्ष तक कोई आदमी एक निश्चिंत समय पर अपने इष्ट मंत्र का जप करे तो उसकी वचन-शक्ति में परिवर्तन आ जायेगा।

हमारी चेतना बदलती है, परिवर्तन महसूस होता है। भीतर से कुछ बदलता है, देश और काल की नियमितता से भी परिवर्तन घटित होता है। ठीक समय पर काम करना और उसी समय वही काम करना जो जिस समय करना है।

संकल्प-शक्ति के विकास के लिए तीन बातें बहुत आवश्यक हैं-इन्द्रिय विजय, कष्ट-सहिष्णुता और मन की एकाग्रता। जिस व्यक्ति में ये तीन बातें नहीं उसकी संकल्प-शक्ति टूट जाती है। एक आदमी संकल्प करता है कि मैं ऐसा नहीं करूंगा, नहीं करूँगा। पर इन्द्रियों पर काबू नहीं। कोई चीज सामने आई और तत्काल संकल्प टूट जाता है। बीमार आदमी सोचता है कि इस चीज से

मुझे बड़ा कष्ट हुआ कल यह मैं नहीं पीऊँगा, नहीं खाऊंगा। किन्तु सामने आया तो कल की बात कल ही रह गई, आज की बात नहीं बनी। क्योंकि इन्द्रियों पर संयम नहीं है। संकल्प-शक्ति के विकास के लिए प्रथम शर्त है- इन्द्रियों का संयम।

दूसरी बात : कष्ट-सहिष्णुता। थोड़ा-सा कष्ट आया और संकल्प टूट गया। कष्ट-सहिष्णुता जिसमें नहीं होती, उसकी संकल्प-शक्ति मजबूत नहीं होती।

तीसरी बात है-मन की चपलता। संकल्प किया पर मन इतना चपल होता है कि मन में तरंग उठी और बात समाप्त।

ये तीन बातें होती हैं तो संकल्प-शक्ति का विकास हो सकता है और बहुत अच्छा हो सकता है।

संकल्प-शक्ति के विकास के लिए एक और महत्त्वपूर्ण प्रयोग है- Suggestion या Auto-Suggestion का। बहुत महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। पश्चिम के लोगों ने एक चिकित्सा की प्रणाली का विकास किया है- आटोजेनिक चिकित्सा पद्धति। आटोजेनिक चिकित्सा पद्धति में स्वतः प्रभाव डालने वाली बात होती है। वे कल्पना करते हैं और कल्पना के सहारे वैसा अनुभव करते हैं। यह आटोजेनिक प्रणाली, इसे योग की भाषा में भावनात्मक प्रयोग कहा जा सकता है । हमारे यहाँ भावना का प्रयोग चलता था कि हम वैसा अनुभव करें। यह हाथ है। आप भावना का प्रयोग करें कि यह ऊपर उठ रहा है। अपने आप उठेगा और आपके सिर पर लग जायेगा, आप उठाने का प्रयास नहीं करेंगे। आप भावना करें कि हाथ भारी हो गया। आपका हाथ बहुत भारी बन जाएगा। कल्पना करें कि हाथ हल्का हो गया है, हल्का हो जाएगा। आप भावना करें कि हाथ ठंड़ा हो रहा है, ठंडा हो जाएगा। भावना करें कि हाथ गर्म हो रहा है, हाथ गर्म हो जाएगा। भावना हमारी चेतना को और वातावरण को बदलती है। यह ठीक भावना का प्रयोग है-आटोजेनिक चिकित्सा पद्धति। इस पद्धति के द्वारा रोगी अपने आप अपने को स्वस्थ करता है। दूसरे मार्ग-दर्शक की बहुत जरूरत नहीं होती। मात्र वह तो कहीं-कहीं सुझाव देता है। रोगी स्वयं अपनी चिकित्सा कर लेता है। ●

भारतीय धर्म में ऐसा कोई नैतिक विचार नहीं है जिस पर बल न दिया गया हो, इसके सर्वाधिक आदर्श एवं अनिवार्य स्वरूप में न रखा हो या शिक्षा, आदेश, दृष्टान्त, कलात्मक रचनाओं और अनुरूप उदाहरण द्वारा लागू न किया गया हो। सत्य, सम्मान, निष्ठा, ईमानदारी, साहस, शुद्धता, प्रेम, सहनशीलता, आत्म-बलिदान, अहिंसा, क्षमा, दया, परोपकार, नेकी इत्यादि भारतीय धार्मिक परम्पराओं के सूत्र में और इस दृष्टिकोण में मानव जीवन और मानव धर्म का सार है। बौद्ध धर्म अपनी उच्च एवं श्रेष्ठ नैतिकता, जैन धर्म अपने आत्म-विजय के तामसिक सिद्धान्तों तथा हिन्दू धर्म सभी धार्मिक पक्षों के शानदार उदाहरणों के साथ अपनी नैतिक शिक्षाओं और अभ्यास में किसी भी धर्म अथवा प्रणाली से कम नहीं है अपितु इनमें सर्वप्रथम है और सबसे ताकतवर प्रभावशाली व्यवस्था रखता है।

– महर्षि श्री अरविन्द

मैं क्षत्रिय हूँ मेरे कलेजे को देखो

– युधिष्ठिर

सबसे प्रबल होता है पुत्र मोह। जिसने उसे तार-तार कर दिया। आँखें तो छलकी पर धर्म की विजय के सामने अपने आपको पराजित मान आँसू चुपचाप निकल गए। क्या दोष है एक आम इंसान का जब तीन लोक के नाथ मर्यादा पुरुषोतम भगवान राम भी माता सीता के वियोग में अपने आँसू रोक न पाये। जिसने एकान्त की साधना को धर्म की साधना से तुच्छ माना।

धधकती हुई अग्नि पुरजोर विरोध कर अपने आकार को बढ़ाने में लगी हुई थी। लपटें पट-पटकर इसका संकेत दे रही थी। जितना विशाल वह कुण्ड था उससे कहीं विशाल अग्नि का आकार। लेकिन सबसे विशाल तो वह था जिसने आतताइयों के असुरत्व को पराकाष्ठा पर पहुँचाया। तभी तो वे आज असुरिय परम्परा को शिखर पर पहुँचाने के लिए अपना अंतिम से अंतिम दाव भी रख रहे हैं। जिसे मानव समझ पिछले नौ दिनों से इस कुण्ड के ऊपर लटकाया हुआ था वह मानव नहीं, आत्मा नहीं परमात्मा का प्रतिबिम्ब है जिसने रजपूती की लाज रखी। कभी न झुकने वाला आज कैसे झुक सकता था। कुण्ड में से नरमांस की बदबू आ रही थी। पवन देवता इसको दूर तक पहुँचाने में सहयोग कर रहे थे। जहाँ-जहाँ दुर्गंध पहुँच रही थी वहाँ-वहाँ लोगों के कलेजे काँप रहे थे। किसी ने ऐसे दण्ड की कल्पना नहीं की थी। दण्ड देने वाला भगवान नहीं था। जल्लाद खुसर-फुसर कर रहे थे। पीढ़ी दर पीढ़ी उन्होंने ऐसा दृश्य कभी न देखा। चाह कर भी कोई जगह छोड़ने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। कुण्ड की धधकती आग ने पिछले नौ दिनों में नौ सौ जनों को निगला। उस कुण्ड के चारों ओर चौसठ भालों पर नरमुण्ड टंगे हुए थे और सिरकटे धड़ों का रक्तरंजित पहाड़ एक ओर पड़ा था।

शत्रु का सैनिक पसीने से तरबतर था। उसने ऐसा काफिर आज तक नहीं देखा। वह शरीर नहीं वज्र था। नौ दिनों से लटकते हुए भी यमराज से आँख मिचौनी खेल रहा था। यमराज एकटक उसे देख रहे थे। वे खुद को और अपने कर्तव्य को भूल चुके थे।

''इसके प्राण भी नहीं निकलते''- दूसरे सैनिक ने गहरी श्वास लेते हुए कहा।

''नौ सौ साथियों को पिछले नौ दिनों में झौंकते हुए देख चुका हूँ। बासठ और हैं। जहाँपनाह किसी को नहीं बख्सेंगे। आज सब के सब मारे जायेंगे।''-यमदूत सा दिखने वाले सैनिक ने भाले की नोक से रक्त पूंछते हुए कहा।

''जहांपनाह की बात क्यों नहीं मान लेता। इसके अधिकतर साथी तो अल्लाह को प्यारे हो गए। यह भी नहीं बचने वाला।

''अल्लाह कसम कभी न सोचा जीवन में ऐसा दृश्य देखूँगा।'' मौलवी के पास खड़े सैनिक ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा।

मौलवी भी अपने ऊपर से भरोसा खो चुका था। नरमांस की दुर्गन्ध से उसकी तबीयत खराब हो चुकी थी। पर दबे हुए स्वर में बोलने के अतिरिक्त और कुछ भी करने का साहस नहीं जुटा पा रहा था।

''कुत्ते के प्राण क्यों नहीं निकल जाते। हमें भी छुटकारा मिले। मन करता है इसके सीने में अभी भाला घोंप दूँ।''- काले कलूटे सैनिक ने चिल्लाते हुए कहा।

''मेरी तो रूह कांप जाती है। लेकिन तुम धीरे बोलो, कहीं जहांपनाह ने सुन लिया तो भाले में पिरोए जाने वालों में बासठवां सिर तुम्हारा होगा।'' मौलवी ने खाँसते हुए कहा।

''पर यह देखो हमारी बातों पर कैसी बेशर्मी से मुस्करा रहा है।''- पहले सैनिक ने दांत भींचते हुए कहा।

यह मुस्कुराहट थी, रजपूती थी, जीवन में आई नई

चेतना की। स्वधर्म के विजय की। लोग प्राणों की भीख माँगते हैं पर जगदम्बा की किलकारी ने सबको अपनी ओर आकृष्ट किया। राजौर गाँव के एक राजपूत के घर में जन्म हुआ। घरवालों ने नाम रखा लक्ष्मणदेव। शिकार और घुड़सवारी का बहुत शौक था। न जाने जीवन में कितने शिकार किए। पर शिकार सही नहीं था। हिरणी निष्प्राण होकर गिर गई। जब हिरणी का पेट चीरा तो दो गर्भस्थ शावक जीवन के लिए तड़फड़ा रहे थे। यह उसी का परिणाम है कि आज खुद को लटकना पड़ रहा है।

फिर क्या था लक्ष्मणदेव बैरागी हो गए थे। एकांत सेवन और ईश्वर चिंतन में लिप्त लक्ष्मणदेव को देश पर मुगलों के आतंक के समाचार अक्सर मिला करते थे। भजन और सदुपदेश उनके जीवन के दैनिक कार्य बन चुके थे। एक दिन गुरु गोविन्द सिंह का उनके जीवन में प्रादुर्भाव हुआ। गुरु गोविन्द सिंह ने कहा–''क्षत्रिय हो, तुम्हारें घर में आततायी घुस आए हैं। तुम कौनसी साधना में तल्लीन हो।'' अब आँखों में अंगारे बरस रहे थे। भुजाएँ फड़क उठी। अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित लक्ष्मणदेव अब बन्दा बैरागी हो गए।

पंजाब आकर सेना का गठन किया। देखते ही देखते अम्बाला, कैथल व सवाना पर कब्जा कर लिया। मुखलिसगढ़ के किले को छीनकर उसका नाम लौटागढ़ कर दिया। सरहिंद के किले में जोरावरसिंह और फतेहसिंह को जिन्दा दीवार में चुनवा दिया गया था। उसने वह किला भी छीन लिया। औरंगजेब बूढ़ा हो चुका था। 1765 के युद्ध में सेनापति वजीर खां भाग खड़ा हुआ। बन्दा की सेना ने मालेर कोटला तथा रायकोट जीत लिया। लाहौर छोड़कर पूरा पंजाब अपने कब्जे में ले लिया। मुगल उसे दैवी पुरुष समझ रहे थे। औरंगजेब बंदा बैरागी को पकड़ने की इच्छा दिल में लिए हुए अल्लाह को प्यारा हो गया। बहादुरशाह को जब पता चला बंदा परिवार के साथ तीर्थयात्रा पर जा रहा है तो उसने सेना भेजी। तीर्थयात्रा बीच में छोड़कर बंदा ने सहारनपुर, मुरादाबाद तथा जलालाबाद का क्षेत्र भी छीन लिया।

अपनों के धोखे ने सदा इतिहास पर कालिख पोती है। ठीक वैसा ही विश्वासघात बन्दा बैरागी के साथ किया गया। बन्दा बैरागी को साढ़े नौ सौ साथियों के साथ धोखे से पकड़ लिया गया। उसे इस्लाम स्वीकार करने के लिए प्रलोभन दिए गए। सौ साथियों की हत्या नित्य की जाती और उसे कलमा पढ़ने की बात कही जाती। उन धड़ों को एक-एक कर आग में फैंका जाता। पिछले नौ दिनों से यही क्रम जारी था।

आज सब कुछ अलग था। बासठ साथियों के सिर धड़ से अलग कर भालों में पिरोए हुए थे। एक-एक साथी का धड़ आग में फैंका जा रहा था। बार-बार उससे पूछा जाता। पीठ पर कोड़ों की बरसात जारी थी। लेकिन मजाल जो एक कराह भी निकले। सारे साथियों के सिर और धड़ आग में फैंक दिए गए।

आतताई ने अपना अंतिम दांव खेला। बन्दा के छह माह के बेटे को वधस्थल पर लाया गया।

क्रूर जल्लाद पुकार उठा। ''बोल कलमा पढ़ता है या नहीं।''

पलकें भीग गई। एक आँसू ने अपनी जगह छोड़ दी। लेकिन दूसरे ही क्षण आँसू जड़ हो गए। पिछले दस दिनों में जिन साढ़े नौ सौ को आग में झौंका गया, वे सब उसके बेटे ही तो थे। एक और सही।

उस गर्म जगह पर छह माह का शिशु लगातार रोए जा रहा था। बच्चे की चीखें कल्पना में सुनाई दे रही थी। मौलवी ने देखा बन्दा बैरागी कुछ सोच रहा है।

''सोच मत बन्दा बैरागी। जल्दी बोल। नहीं तो बच्चे की आंतड़ियाँ चीरने में देर नहीं लगेगी।''

''सोचा तो था मेरा बेटा बदला लेगा। काल बनकर मुगलों पर गरजेगा। आज ही तो परिवार को समझने और संभालने के बारे में सोचा। आज आखिरी उम्मीद भी टूट रही है। क्या कलमा पढ़ लूं? पढ़ने के बाद इन्कार भी तो कर सकता हूँ।''

''ये काफिर बोल क्यों नहीं रहा। देखो तो जल्लाद कहीं मर तो नहीं गया।''

उस भीषण गर्मी में बालक का रूदन, कानों में खौलता तेल उडेलने जैसा था।

आँसू फिर अपने स्थान पर उमड़ आए। वो गिरने को आतुर थे। बन्दा बैरागी ने अपनी छाती में उठने वाले उबार को जबरदस्ती दबाने का प्रयास किया। गाल पर आँसू की रेखा बन चुकी थी।

मौलवी मुस्कुरा उठा। पास आकर धीमे स्वर में कहा–''बोलो! पढोगे कलमा।''

बंदा बैरागी ने मौलवी के चेहरे पर थूक दिया। ''आऽऽऽ थू।''

थूक के छींटे मौलवी की दाढ़ी में उलझ गए। बहादुरशाह ने प्रवेश करते हुए ये सब देखा और चीख उठा।

''जल्लाद! चीर दो हरामी की औलाद का सीना।''

सहसा बच्चे के रुदन पर नीरवता छा गई। बादुरशाह फिर चीखा–''इसका कलेजा बाहर निकालो''

कांपते हुए हाथों से जल्लाद ने दूसरी आज्ञा का पालन किया।

उसने कलेजा जल्लाद से छीना और बन्दा के मुँह में ठूंसने की कोशिश की पर कामयाब नहीं हुआ। फिर उसने कलेजे का माँस बंदा बैरागी के चेहरे पर मसल दिया।

बंदा बैरागी का सिर कलम करने का आदेश देकर वह तेज कदमों से चला गया। सिर कटकर बाहर की ओर लुढ़क गया। आत्मा शरीर से आजाद हो चुकी थी। काली का खप्पर छलक उठा। इतिहास के पन्ने फड़फड़ा उठे। उसमें रक्त से लिखा यह इतिहास मिला–''मैं क्षत्रिय हूँ, मेरे कलेजे को देखो।'' ●

फार्म–4 (नियम–8)

1.	प्रकाशन स्थान	:	ए–8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर–302 012
2.	प्रकाशन अवधि	:	मासिक
3.	मुद्रक का नाम	:	लक्ष्मणसिंह
	नागरिकता	:	भारतीय
	क्या विदेशी हैं	:	नहीं
	पता	:	ए–8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर–302 012
4.	प्रकाशक का नाम	:	लक्ष्मणसिंह
	नागरिकता	:	भारतीय
	क्या विदेशी हैं	:	नहीं
	पता	:	ए–8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर–302 012
5.	सम्पादक का नाम	:	लक्ष्मणसिंह
	नागरिकता	:	भारतीय
	क्या विदेशी हैं	:	नहीं
	पता	:	ए–8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार व हिस्सेदार हों।	:	पूर्ण स्वामित्व–श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास ए–8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर

मैं एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

1–4–2024 **लक्ष्मणसिंह,** प्रकाशक

क्षत्रिय श्रृजेता बने श्रेष्ठता का परिचय दें

– गुमानसिंह भुण्ड़वा

मनुष्य इस सृष्टि का सर्वोपरी मुकुटभाण है। तदनुरूप ही उसे गौरव और वर्चस्व मिला है। देवताओं ने भी बारम्बार मानव जन्म के हेतु इच्छा, आकांक्षा रखी। मानव अपने जन्म के साथ कुछ भी सीखकर नहीं आता बल्कि इस विशाल मानवलोक में प्रकृति प्रेरणा से मानव को इच्छा, आकांक्षा और विचारणा की ऐसी सामर्थ्य मिली है जिसका उपयोग करके वह जैसा चाहे बन सकता है। वह देवता भी बन सकता है और दानव भी। वह सज्जन भी बन सकता सकता है और दुर्जन भी। यह पूर्णतया उसकी इच्छा के ऊपर निर्भर करता है। कुछ व्यक्ति प्रचलित लोक प्रवाह की पतनोन्मुखी धारा को चीरते हुए अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त करते ऊँचे उठते और सामान्य से असामान्य महामानवों की श्रेणी में जा पहुँचते हैं। उनके सरल व सुशील स्वस्थ विचारों और व्यवहार की एकरूपता ही जीवन में गहरी प्रेरणादायी बनती है। सामान्य स्तर से ऊपर उठकर महामानवों की श्रेणी में पहुँचने वालों में महारानी झांसी की रानी, तांत्या टोपे, टीपू सुल्तान, ब्रिगेडियर विजयबहादुर सिंह, ठाकुर कुशाल सिंह आऊवा, ठाकुर श्याम सिंह चौहटन, राव गोपाल सिंह खरवा, राजा बख्तावर सिंह आमझरा, ठाकुर खुमाण सिंह बीदावत लोड़सर, ठाकुर रणजीत सिंह नाथावत चौमू, राव बख्त सिंह चौहान बेदला, राव रणजीत सिंह चूण्डावत देवगढ़, राव जोध सिंह कोठारिया, महाराणा फतेह सिंह उदयपुर (मेवाड़), ठाकुर केशरी सिंह बारहठ शाहपुरा, ठाकुर श्याम सिंह शेखावत, महाराजा बलवन्त सिंह गोठड़ा, राजा बलवन्त सिंह भिणाय, महाराज पृथ्वी सिंह हाडा कोटा, ठाकुर विशनसिंह मेड़तिया गूलर, कान सिंह सलेदी का झुन्झुनू, रावल केशरी सिंह चूण्डावत सलूम्बर आदि आदि देश की आजादी के लिए आजादी के परवाने जहाँ स्वतन्त्रता संग्राम की होली में ब्रिटिश सरकार से जूझ रहे थे वहाँ तीन चौथाई भारतीय खुले तौर से अंग्रेजों के पिछलग्गु बन रिश्वत, भ्रष्टाचार और विश्वासघात के बल पर भाई भाई के विरुद्ध अंग्रेजों से मिल अपने-अपने महलों में दिवाली मना रहे थे। निश्चय ही सन् 1857 की क्रान्ति में हमारे ही देश के दिवाली मनाने वाले सपूत हमारी गुलाम मातृभूमि की दुर्दशा के लिये चन्द चाँदी के ठीकरों हेतु प्रलोभनवश अंग्रेजों के समक्ष उस समय न बिककर संगठित होते तो सन् 1857 के बाद के भारत का इतिहास कुछ और ही होता, भौगोलिक स्थिति कुछ और ही होती। वे उनकी अवांछनीय इच्छाएँ ही थी, स्वार्थी आकांक्षाएँ ही थी, लालची विचारणाएँ ही थी और टूटता मनोबल ही था जिसने अंग्रेजों के मुँह में पानी भर, कुटनीतिक दांवपेच रचकर अपने साम्राज्य की नींव जमाने के लिए मूक रूप से उनका आह्वान किया। उनके प्रमाद की वह पराकाष्ठा ही थी कि स्वर्णगिरी एवं स्वर्गदीपों से विभूषित शस्य श्यामला भारत भूमि की समुन्नति को, प्रलोभन में आकर अंग्रेजों को अपने साम्राज्य की जड़ें गहरी जमाने का अवसर प्रदान किया। इतना ही नहीं अपने देश की प्रगति की जिम्मेदारी विदेशियों पर छोड़कर तात्कालिक शहंशाहों ने अपने गुरुत्तर उत्तरदायित्वों से छुट्टी ले ली। फलस्वरूप उनका वह सामयिक प्रमाद कितना महंगा पड़ा, कितना हानिकारक हुआ, कितना दुःखदायी सिद्ध हुआ उसका लेखा-जोखा समाज की पीड़ा इतिहास के पृष्ठों में छिपाये बैठी है।

अनेक तो पदलिप्सा एवं कुर्सी लिप्सा की लालसा में बहक कर कहीं के कहीं पहुँच गये मगर थोड़े से व्यक्तियों को अनुभव हुआ, उन्होंने समय की माँग को परखा, अनुभूति पीड़ा में बदली, मन में कसक उठी और

सोये पुरुषार्थ ने अंगडाई ली। उन थोड़े व्यक्तियों की थोड़ी-सी जाग्रति का प्रतिफल विचार कान्ति के बीजारोपण के रूप में हुआ। क्रान्ति अर्थात् परिवर्तन, जो अनुचित को स्वीकार करने में स्पष्ट रूप से इन्कार कर दे। उन आत्माओं ने बिखरती कड़ियें समाज की सम्हाली, वृद्ध भावना में जान फूंकी तथा बिछुड़ते काफिले को चेतनावस्था में लाकर, कर्मफल और हमारे दृष्टिकोण की विचार क्रान्ति का स्थान-स्थान पर अलख जगाया। सुसुप्तों को जगाया और आध्यात्मिक दर्शन को साहित्यों के रूप में और श्री क्षत्रिय युवक संघ के रूप में समाज को एक नई और वर्तमान के उपयुक्त आदर्श दिशा धारा का स्वरूप रखा। उन्होंने अपने अधिकारों को त्याग कर्तव्य को प्रमुखता दी। राजा से लेकर झोपड़ियों में निवास करने वाले क्षत्रियों का नेतृत्व किया, मार्गदर्शन किया। पद एवं प्रतिष्ठा की घृणित लिप्सा से दूर रहकर समाज कार्य जैसे गुरुतर उत्तरदायित्व को वहन किया और निभाया। नेतृत्व पहले विशुद्ध रूप से सेवा का मार्ग था, एक अत्यन्त कष्ट साध्य कार्य होता था जिसे समाज पीड़ा से चिन्तित ही कर पाते थे। ये पाते कुछ नहीं थे बल्कि स्वयं तो सब कुछ गंवाते ही थे। स्वेच्छापूर्वक कठिनाई का मार्ग चुन बिना किसी इच्छा महत्त्वकांक्षा के वे समाज में संव्याप्त पीड़ा के निवारण हेतु प्रयत्नशील रहते ऐसी महान् आत्माएँ स्वर्गीय श्री तन सिंह जी व श्री आयुवान सिंह जी की आज कलम जय बोले बिना नहीं रह सकती। उन्नीसवीं सदी की महान उथल-पुथल बेला में वे समाज के प्रहरी बने, समाज हेतु र्स्वस्व स्वहितों को त्याग स्वयं ने पत्थरों की चोटें खाई और आने वाली पीढ़ी के लिए नींव के पत्थर बने। यदि उनका यह सराहनीय योग, समाज हेतु त्याग, अपने अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्य को प्रमुखता, समर्पण पराक्रम जाति समाज, धर्म, संस्कृति एवं देश के प्रति न रहा होता तो आज हम स्थान-स्थान पर संगठित रूप से एकत्रित हो एकता, एकात्मता और उच्च आदर्शों के लिए जो सभाओं, सम्मेलनों, संगठनों, कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं व भविष्य के लिए एक नई समाज की आधारशीला तैयार करते हैं वे आज देखने के लिये ही नहीं सुनने के लिए भी मिलनी दुश्वार होती।

आज स्थिति कुछ भिन्न है। विगत की उपलब्धियों को लेकर जहाँ एक तरफ राजा से लेकर कृषक राजपूत तक जिन्हें समाज के प्रति दर्द है, सम्पूर्ण देश में जगह- जगह पर संगठन के बीजारोपण में प्रयत्नशील है वहाँ अनेक पद लिप्सा एवं नेतागिरी के दौर में ही व्यस्त हैं। नेतागिरी भी अब अन्य व्यवसायों की तरह एक व्यवसाय बन गया है। यह भी ऐसा व्यवसाय जिसमें स्वयं का कुछ भी लगाना नहीं पड़ता। न श्रम लगाने की जरूरत न पूंजी, बस थोड़ी-सी चतुरता से मुफ्त में जबान चलाते रहने से ही, केवल वाक् कुशलता से ही अपनी गाड़ी सुगमता से चलती रहती है। इस मनोवृति के कारण अधिकांश नेता बनने के इच्छुक रहते हैं इसी कारण राजनीति के क्षेत्र में निट्ठले व्यक्तियों की संख्या बढ़ती जा रही है जबकि समाज शृजेताओं की संख्या उतनी नहीं बढ रही है। उन्हें गम्भीरता से विचार करना चाहिये कि क्या राजनीति से पृथक रहकर कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य जन सहयोग में नहीं किये जा सकते? जिनमें कसक होगी, भावनाएँ होगी, उन्हें अपने ही क्षेत्र में असंख्य काम अपनी ही आँखों से दिखाई देंगे। वर्तमान की परिस्थितियों एवं उनसे जुड़ी हुई समस्याओं से कौन जन अपरिचित होगा? लेकिन ऐसे कार्य जो श्रमसाध्य, कष्टसाध्य हैं और जिनमें अपने हाथ जलाने के सिवाय स्वयं के स्वार्थ की पूर्ति कुछ नहीं होती यही सोचकर अधिकांश उनमें जानते हुए भी हाथ नहीं डालते। वर्तमान की परिस्थितियों से जुडी हुई अनेक ऐसी समस्याएँ हैं जो वस्तुतः अज्ञान के कारण उत्पन्न होती हैं जिनका बिना धन एवं बिना पद के हल निकाला जा सकता है लेकिन जो यह कहते हैं पद अथवा सत्ता के बिना कुछ नहीं किया जा सकता उन्हें ज्ञातव्य रहे कि

स्वर्गीय तनसिंह जी व श्री आयुवान सिंह जी समाज के महान पथ प्रदर्शक बने, पद प्रतिष्ठा से कोसों दूर रहते हुए समाज कार्य में तल्लीन रहे। उन्हें इनसे सबक लेना चाहिए कि मात्र व्यक्तित्व के मनोबल पर ही बहुत कुछ किया जा सकता है। इसके लिये आवश्यक बस इतना ही है कि हम वाक कुशल की बजाए कार्य कुशल बनें। नेता की बजाए शृजेता बनें।

एक बार पढ़ा ''जिस क्षत्रिय ने काम के हाथ लगाया समाज के अन्य लोग उसे कमजोर और नीचा मानने लगे।'' इसी तरह ''वयोवृद्ध नवयुवकों को साथ नहीं लेंगे तब तक कार्य में गति नहीं आ सकती। वृद्धों के और नवयुवकों के विचारों में तनाव का प्रभाव कार्य पर पड़ता है।'' निश्चय ही दोनों बातें बड़ी मार्मिक बताई हैं। जो पसीना बहाकर रोटी कमाने वालों को छोटा समझते हैं और आराम तलबी में बैठे ठाले दिन काटने वाले, नेतागिरी करने वालों को बड़े समझते हैं उन्हें जरा यह भी ख्याल करना चाहिये कि राजा जनक हल चलाते थे और खेती करते थे, कबीर सूत बुनते, रैदास जूते बुनते, गाँधी चरखा कातते और अपना सारा कार्य स्वयं के हाथों से किया करते थे। इस श्रम उपार्जन से उनके बड़प्पन में कोई कमी नहीं आई। अपने अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्य को प्रमुखता देने की नियत यदि निभ सके तो नेता बनने की बजाए शृजेता बनने में अपनी श्रेष्ठता का परिचय देने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती है। अकेले राणा प्रताप ने, अकेले शिवाजी ने, अकेली मीरा बाई ने, अकेली पन्ना खींची ने, अकेली रानी पद्मिनी ने, अकेले गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने, अकेले सुभाष चन्द्र बोस ने, अकेले स्वामी विवेकानन्द ने, अकेले स्वामी करपात्रीजी महाराज ने, अकेले लोकनायक जय प्रकाश नारायण ने, अकेले सन्त विनोबा भावे ने अपने भीतर सोये मानवता के अनगिनत गुणों से प्रभावित कर, असंख्य अनुचर खड़े कर दिये थे। इन लोगों को निश्चय ही वरिष्ठ, विशिष्ठ कहा जायेगा भले ही वे धनी या ऊंचे पद के धनी अथवा महलों में निवास करने वाले न भी हों।

एक ख्याति प्राप्त विद्वान खलिल जिब्रान लिखते हैं ''जो दूसरों का दर्द नहीं समझ सकते जिन्हें आपाधापी के अलावा कुछ नहीं सूझता, जिनके पास दूसरों को धोखा देकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना ही एकमात्र धन्धा है वे जिन्दे भूत हैं। ऐसे व्यक्ति धरती पर बोझ हैं, समाज के लिये सिरदर्द हैं, जीवित रहते हुए भी मृतक के समान हैं। उन्हें दफन नहीं करोगे तो दुनिया में जिन्दों को रहने के लिए जगह ही कहाँ बचेगी?'' आगे फिर कहते हैं ''वह आदमी देश पर आफत लाता है जो न कभी बीज बोता है, न ईंट थापता है, न कपड़ा बुनता है मगर राजनीति को अपना धन्धा बनाता है।'' संसार को लाभान्वित करने वाले ऐसे अनेक विद्वानों में अपने सद्विचारों के अनमोल वचन ग्रन्थागार रूप में अपनी जीवनगाथा के रूप में पीछे वालों के लिए छोड़ स्वयं महामानवों की श्रेणी में पहुँचे। यह हमारा कर्तव्य है कि हम उनके अनुदानों को सुनें, समझें, हृदयंगम करें एवं व्यवहारों में ढालें जो ज्ञान और अनुभवों का संचय उन ग्रंथों में विद्यमान रहता है। गीता का कथन है- ''ज्ञान के समान पवित्र इस संसार में और कुछ नहीं।'' मगर यह समूची प्रक्रिया तभी सधती है जब हम उन पवित्र ग्रंथों को पढें और श्रृद्धापूर्वक उनका महत्त्व समझें। मनुष्य की योग्यता भी छोटी नहीं है उसकी गरिमा और समर्थता तो उसके भीतर सोई हुई उत्कृष्ट आत्मा पर निर्भर है। वर्तमान समय का उत्तरदायित्व जाग्रत आत्माओं को ही निभाना होगा। जलते दीपक से बुझे दीपक जलते हैं। अस्तु आवश्यकता तो उन्हीं की पड़ेगी जिनकी संरचना बड़े काम के लिए बड़ी आशाएँ संजोकर सृष्टा ने की है। वे मानवी गरिमा का स्मरण करें तथा मनस्थिति और परिस्थिति के साथ परिवर्तन के इस प्रभात पर्व पर विषमताओं, विपन्नताओं एवं अवांछनीयताओं से जूझने का उपक्रम बनावें। अभाव, अज्ञान और अनाचार से

लोहा लें, आलस्य, अहंकार का दाह-संस्कार करें। ऐसी विषम वेला में जो मूकदर्शक बने रहते हैं अथवा जो यह कहते हैं कि अब बड़ा पद मिल गया है अत: जनसेवा का अवसर ही नहीं मिलता ऐसे लोगों के इस कथन पर तो स्वाभाविक रूप से शक होता ही है मगर उनमें और दीवार पर टंगे चित्र में भी फिर कोई अन्तर नहीं रह जाता। पद प्राप्ति के अहमभाव में जब उनकी वाणी से ऐसा कहते सुना जाता है तो उन सज्जनों की जीवनी पर भी एक नजर दौड़ाना आवश्यक हो जाता है जिन्होंने वरिष्ठ से वरिष्ठ पद पर नियुक्त होकर सम्पूर्ण सेवाकाल में प्रत्येक वर्ग के जन जन के गले के हार बनकर रहे और समाज के मुकुटमणि बने। जयपुर राज्य के सर्वोच्च ख्याति प्राप्त धनाढ्य राजघराने में जन्मे ले. कर्नल सवाई भवानी सिंह जी जयपुर ने सन् 1971 में भारत-पाक युद्ध में देश के आह्वान पर मातृभूमि की लाज बचाने स्‍र्वस्व को त्याग देश हित में कर्तव्य का पथ चुनकर सिन्ध प्रान्त में जो शौर्य दिखाया, यवनों के षड्यंत्र चक्र को भेदकर विमान सहित कितनी कुशलता से बाल-बाल बचे और भारतीय जवानों की सहायता कर उनके हौंसले बुलन्द किये, यवनों के दांत खट्टे किये इसकी जन जन को पूरी जानकारी है। इससे बढकर मानव की महानता और क्या हो सकती है। इसी भाँति भारतीय प्रशासनिक सेवाओं में रहते अपने कर्तव्यों से भी ऊपर उठकर नम्रता, विनयशीलला, प्रेमपूर्ण व्यवहार, उदार प्रवृति विशाल हृदय से, सद्भावनाएँ एवं सहयोग द्वारा हर वर्ग का हर नागरिक जितना लाभान्वित, प्रभावित होता है, जन जन की वाणी से उनके कार्यकलापों की सस्नेह एवं सहयोग भरी सराहनाएँ सुनना निश्चित रूप से एक महान वरिष्ठ एवं विशिष्ठ व्यक्तियों की पंक्ति में उनका मूल्यांकन करना है। ऐसे उच्चतम गरिमामय व्यक्तित्व वाले महान् जनसेवकों की कलम आज जय बोले बिना नहीं रह सकती। श्रेष्ठता, सफलता किसी पर छप्पर फाड़कर नहीं टपकती। इसके लिये अथक प्रयासों की आवश्यकता है। सफल जीवन की यही एकमात्र रीति-नीति है। हमारा भी यह प्रयास बने कि हम इन महान प्रतिभाओं के पथ का अनुकरण करें व अनुचर बनें जिससे समाज शृजेता बनें एवं श्रेष्ठता का परिचय दे सकने में समर्थ हो सकें। हमारे आन्तरिक व्यवहार और बाहरी दृष्टिकोण में सामञ्जस्यता बैठ सके।

●

बिन्दु भी सिन्धु समान, को अचरज कासों कहें;
होनहार हैरान, रहिमन अपने आप ने।

रहीम कहते हैं-अपने भीतर देखा तो मैं हैरान रह गया हूँ, चकित, अवाक! खुद ही भरोसा नहीं आ रहा है कि मैं और परमात्मा! यह जो उठ रही है वाणी भीतर से, अचानक का नाद उठ रहा है, यह जो अहं ब्रह्मास्मि की गूंज आ रही है, यह जो ओंकार जग रहा है,-मुझे ही भरोसा नहीं आता कि मैं रहीम मैं, मेरे जैसा क्षुद्र, साधारण आदमी....मैं और भगवान! बिन्दु भी सिन्धु समान! अब मैं किससे कहूँ, खुद ही भरोसा नहीं आता तो किससे कहूँ?

मात्र शास्त्र पढकर कोई सिद्धान्त या ज्ञान नहीं जाना जाता, स्वयं में उतर कर जाना जाता है।

जीवन के टेढे-मेढे पथ

– स्व. सूरतसिंह कालवा

यादें मुट्ठियों में बन्द नहीं की जा सकती, उनका स्रोत मन की शिराओं के एक कोने में एक घाव की तरह होता है। इसलिए यादें रिसती हैं और आँखों के रास्ते बहती हैं–

हँसने की चाह ने मुझे इतना रुलाया है।
कोई हमदर्द नहीं, बस दर्द मेरा साया है।।

जब कोई व्यक्ति जान लेता है कि उस पर शक (संदेह) किया जा रहा है तब उसका व्यवहार अस्वाभाविक हो जाता है। निश्चयात्मक रूप से अपना मत प्रकट करने को असर्टिव होना कहते हैं। असर्टिव होने का अर्थ है अपने मत (विचार) को प्रकट करने को तैयार रहना, विचार को छिपाना अथवा दबाना नहीं, किसी पर दोषारोपण करना या उसके दोष गिनाना नहीं। निश्चयात्म प्रवृति का अर्थ अपनी नाखुशी या असहमति को ठीक से व्यक्त करना है। यदि आपका मत दूसरे से भिन्न है तो उसे व्यक्त करना असर्टिव होने की निशानी है। दूसरे का सम्मान करते हुए अपने मत को बराबर महत्त्व देते हुए अपने मत और अपने सम्मान के प्रति सजग रहना निश्चयात्मक प्रवृत्ति को दर्शाता है। हम निश्चयात्मक होने से डरते हैं, क्योंकि हमें लगता है कि अपना मत रखना विरोध माना जाएगा या उसे दखलन्दाजी Interference माना जाएगा और लोग हमें नापसन्द करेंगे हमारी ओर टेढ़ी नजर रखेंगे। किन्तु असर्टिव होने का अर्थ आक्रामक होना हर्गिज नहीं है। जहाँ आक्रामकता दूसरे का दमन करते हुए अपनी इच्छाओं, जरूरतों को सर्वोपरि मानने की प्रवृति है, निश्चयात्मकता वहीं अपने विचारों की स्वतंत्र, ईमानदार, विनम्र किन्तु दृढ़ अभिव्यक्ति है। इसमें इसके विचारों के प्रति बराबर संवेदनशीलता का पुट समाया रहता है। असर्टिव होना किसी के अधिकारों का हनन नहीं, अपितु अपने मत को मात्र प्रकट करना है। सम्मान, सौम्यता और विश्वास के साथ जीने, व्यवहार करने का नाम **असर्टिवनेस** है। लोकप्रिय या चहेते बने रहने के लिए Adjust करके चलते रहना तो एक **छलना** है।

जीवन में ऐसे भी दौर आते हैं, जब सीने में घटा घिरती है, परन्तु आँखों में बरसती है, यह एक अजीब बेचैनी का दौर होता है। खुशामदियों को, महत्त्वाकांक्षी युवाओं को यह नहीं समझना चाहिए कि वे कभी बूढ़े नहीं होंगे या उनके दिन कभी बदलेंगे नहीं। चालीस पार सन्ध्या के पूर्व का समय होता है, बुढापे की रात वहाँ से कुछ ही कदम दूर होती है। सफलता को निश्चित करने के लिये समाज के लोगों को समझना चाहिए कि संघ कार्य या संघ का आंदोलन हमारी भावी पीढ़ी के लिये, सुख और समृद्धि के लिए है। सफलता के लिये कौशल भी चाहिए और किस्मत भी। हमें अपनी कारगुजारियों से किस्मत के रास्ते में काँटे नहीं बिखेरने चाहिए। शिखर पर पहुँचा हुआ आदमी संस्था बन जाता है।

आत्मविश्वास का अभाव, नकारात्मक सोच परालोचना, अहं, स्वार्थ आत्म केन्द्रित सोच आदि स्वाभाविक दुर्बलताएँ हैं। हम अपने आप में कई सम्भावनाएँ देखते हैं, किन्तु वातावरण और परिस्थितियों का बहाना बनाकर उन सम्भावनाओं को फलीभूत नहीं होने देते। महत्त्वाकांक्षी अवश्य होना चाहिए, किन्तु अति उत्साह और अति महत्त्वाकांक्षा से असफलता ही हाथ लगती है और असफलता से पनपता है **नकारात्मक सोच**। जाने कौनसी दुष्प्रवृति हमारे भीतर न जाने किस प्रतिभा के अंकुर को दबाए बैठी है कि वह प्रतिभा के अंकुर को पुष्पित-पल्लवित होने में अवरोध पैदा करती रहती है। हम उन अवरोधों को जानें और उन्हें हटाने का प्रयास करें जो हमारे भीतर इन दोषों और दुर्गुणों के रूप में पल रहे हैं। किसी की आलोचना करने की आदत को

सराहना या प्रशंसा करने की आदत में बदल सकें तो हमारी छवि का विकास होगा, जो हमें हमारे भीतर सुधार की सभी सम्भावनाओं पर विचार करने के लिये प्रेरित भी करेगी। कई बार भीड़ में कोई एक व्यक्ति हमारा ध्यान आकर्षित करता है। यह आकर्षण प्राकृतिक भी हो सकता है और आत्मिक भी। हर परिस्थिति में अपने आपको सहज और सतर्क रखना व्यक्ति की विशेषता होती है। यही विशेषता (व्यक्तित्व) हमें किसी जाने अनजाने व्यक्ति से जोड़ सकती है। हमारा व्यक्तित्व हमारे परिवार द्वारा प्रदत्त संस्कारों का दर्पण होता है। अच्छे कार्यों के परिणाम अनन्त काल तक मिल सकते हैं। अच्छे कार्य रबड़ की गेंद की तरह होते हैं जो लौटकर आते हैं, जबकि बुरे कार्य पत्थर की तरह पड़े रहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी सुविधा अनुसार प्रभाव ग्रहण करता है। निर्देशक को भी निर्देश देने वाले बहुत हैं, निर्देशन में अनुकूल रहने वालों का टोटा है। घड़ी के पैन्डूलम की तरह हमारे तथाकथित समझदार साथी अपने विचारों में झूलते ही रहते हैं।

एक आदमी का निर्णय जब बहुत लोगों को प्रभावित करता है तब उस आदमी को निर्णय लेने से पहले बहुत सोचना चाहिए। शक्ति परीक्षण से पहले समय परीक्षण और समझ परीक्षण कर लेना चाहिए। हम पोलीटिशियन नहीं, समाज सेवक या सामाजिक कार्यकर्ता हैं। एक पोलीटिशियन हमेशा अपने से छोटे आदमी को अपने पास रखना चाहता है, बराबर के आदमी को पोलीटिशियन अपने साथ नहीं रखता। मनुष्य में विवेक हो तो उसके साथ उसके पूर्वाग्रह ही जुड़े रहते हैं, कई बार इन्हीं पूर्वाग्रहों का प्रभाव उसके व्यवहार पर पड़ता है जिसके कारण उसके निर्णय भी प्रभावित होते हैं।

''यज्ञायाचरत: कर्म समग्रं प्रविलीयते''

अर्थात् मनुष्य को केवल दूसरों के हित के लिये ही कर्म करने चाहिए, अपने स्वार्थ के लिए नहीं।

निष्कामभाव पूर्वक कर्तव्य कर्म करने से मनुष्य बन्धन मुक्त और सकामभावपूर्वक कर्तव्य कर्म करने से बन्धन में बँध जाता है। बाहरी आचरण, रहन-सहन, वेशभूषा आदि को तो गीता में भगवान ने महत्त्वहीन माना है, **भाव** को ही महत्त्व दिया गया है। विशेषता तो भाव में ही है, क्रिया में नहीं, क्योंकि क्रिया तो मनुष्य पाखण्ड से भी कर सकता है। मन के मत से की जाने वाली सब क्रियाएँ तो साधक को पथ से विचलित ही करती हैं। संसार में जहाँ कहीं जिस किसी में विशेषता, विलक्षणता, सुन्दरता, आकर्षण, अलौकिकता, महत्ता दिखती है उस ओर हमारा मन खिंचता ही है। यह विलक्षणता, अलौकिकता आदि सब भगवान की है अत: चिन्तन सदा भगवान का ही होना चाहिए, किसी वस्तु अथवा किसी व्यक्ति का चिंतन नहीं। व्यक्ति तो अपनी बुद्धि के बल पर बहुत नाटक करना जानता है, बातें बनाना जानता है, रिझाना भी जानता है परन्तु साधक को, शिक्षक को सदा सावधान ही रहना चाहिए।

नये युगों के निर्माताओं के कदम काँपने लगते हैं, भावों का सागर जब सूखने लगता है तब ऐसा वैसा ही कुछ घटित होने लगता है। मसखरे मौज मनाते हैं और और..... फिर तो, बोलना गुनाह हो तो मौन में विश्वास हो। पथ के बनजारों को पथ पर लाज आती है और खुशामदिये मसखरियाँ करते दिखते हैं। तब कौन किसको क्या सिखाए? यह बातें सीखने की हो तो कोई भी सीख सकता है। जीवन के पथ बहुत **टेढे-मेढे** हैं, सीधे होते तो कोई भी चल सकता है, पार हो सकता है।

पूज्य तनसिंह जी ने लिखा ही है -

काँटे ही काँटे यहाँ दुनिया में ठोर कहाँ?
सो के दम लूँ भी कहाँ?
आया जब कोई गठरी लिए था
जान सका नहीं किसके लिए था
चल दूँगा.......करके बयाँ
और.....और वे अपना दर्द बयां करके
चले ही गए।।

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

– भंवरसिंह मांडासी

मित्र–मण्डल

क्रान्तिकारी राव गोपाल सिंह खरवा व बारहठ केसरी सिंह सौदा की मित्र–मण्डली का वर्णन 'सौदा–सुजस' में इस प्रकार किया गया है–

संस्कृत हिन्दी फारसी, पटु अंगरेजी प्रज्ञ
दुरजनसिंह राजा दिप्यो, नरूको सुनीतिज्ञ
नरूको सुनीतिज्ञ, जकै दिन जावली
हिमती केसर हूँत–सहाय सलावली
सम्मुख नृप जयसिंह, टिक्यो ली टक्करां
मैमोरियल मरद, अरप हद अक्खरां।।10।।

सुपह शिरोमणि रामसिंह, सीतामऊ सज्जयोह
सुचि कोटा उम्मेदसिंह छत्रपति छज्जयोह
छत्रपति छज्जयोह, हुतो खाटू हरी
गढ़ खरवै गोपाल, भूर मलसीसर
सिंह प्रताप संखवास, इत्याद अखण्डिया
नामी नर नारायण मित्र गण मण्डिया।।11।।

(कवि अक्षयसिंह रत्नू अलवरस्थ द्वारा आकाशवाणी जयपुर से प्रसारित 'सौदा सुजस' से साभार)

अक्षयसिंह रत्नु राजा दुरजनसिंह जावली जो अलवर के महाराजा सवाई जयसिंह के राज्य में मन्त्री थे व उनके पुत्र रघुवीर सिंह जावली जो बाद में अलवर राज्य में गृह–मन्त्री रहे, के अति विश्वासपात्र लोगों में से एक थे। इन्होंने बारहठ ठा. केसरीसिंह के जीवन पर 'सौदा सुजस' नामक काव्य की रचना की थी। राजा दुर्जनसिंह जावली भी क्रान्तिकारियों के सहयोगी होने के साथ विचारक व भक्त भी थे। उन्होंने 'श्री भगवद्‌गीता सिद्धान्त' पुस्तक भी लिखी है।

रामसिंह सीतामऊ विख्यात इतिहासकार कुं. रघुवीर सिंह सीतामऊ के पिता थे। अरविन्द घोष ने लिखा है कि उनको क्रान्ति के लिए प्रथम प्रेरणा रामसिंह राठौड़ से मिली। जिनसे मेवाड़ में भेंट हुई थी। यह वही राठौड़ रामसिंह सीतामऊ थे, जिनका विवाह बीकानेर राज्य में ठि. भालेरी जो कुमावत कछावों का ठिकाना है, में हुआ था। उन दिनों इनके उत्तराधिकार का झगड़ा चल रहा था। अतः यह कुछ वर्षों तक राजस्थान में भ्रमण करते रहे थे।

'सौदा सुजस' में राव गोपाल सिंह
खरवै राव खिलाफती, अंगरेजां उण काल
मिणधारी मोटो मिनख गुणधारी गोपाल
गुणधारी गोपाल, कविवर केसरी
मिल रचना इसकीम, अभय उद्देस री
माथै कफ्फन मेल, खेल हद खेलिया
बिहूं राज विद्रोह, गेल दुख झेलिया।।98।।

मेवाड़ के महाराणा को दिल्ली दरबार से रोकना–

पतसाहां आगै पतो, नम्यूं नथी नरनाह
सुत उण दिली सिधावणूं, सुण अलवर जयसाह
सुण अलवर जयसाह, खिनायो खास नै
चम्पावत अति चतुर, नारायणदास नै
उण जैपर अेकठा, किया थल कूरमां
भड़ मलसीसर भूर, सुडेरै सूरमाँ।।14।।

सुपह खंडेलै सजनसिंघ, खरवै राव गोपाल
जोबनेर करणेस जुत, केसरसिंघ कराल,
केसरसिंघ कराल, हुलस खाटु हरी
रोकण हित महाराण, कूट मंत्रणा करी
हिन्दवा सुरज हमैं, दिल्ली दरबार मैं
हाजिर होता हास, सभी संसार मैं।।15।।

जद अकबर ढिग जांवता, पीथल रख्यो प्रताप
केसर नैं कहियो करो, अब उद्‌बोधन आप

अब उद्‌बोधन आप, ध्रुव कुल धारणां
दरसाधो दुनियांण, चमको चारणां
कायर नै भी कारण, बहादर भव्य है
कूबत केसर कलम, कवी करतव्य है।।16।।

खुद केसर तो हो दुखी–गमन्ता गहलोत
प्रेरन्ताई व्हो प्रस्फुटित, सुभ्र वीररस स्रोत
सुभ्र वीररस स्रोत, उमंग्यो अंग मैं
दुहा त्रिदस लिख दिया, पयान प्रसंग मैं
चेतावणि चूंगट्या, अजूं अखियात है
इंजेक्सन सम असर, गात उमगात है।।17।।

पहुँचावण इन पत्र नैं, गहियो राव गुपाल
खरवै गयां लागी खबर, मग मांही फतमाल
मग मांही फतमाल, अठी नै ही आरह्यो
दिल्ली रै दरबार–रेल हूँ जा रह्यो
देय पत्र निज दूत, पठायो पन्थ मैं
सरेरी सुमेवाड़, अवनि रै अन्त में।।18।।

– अक्षयसिंह रत्नू

साभार : 'राव गोपाल सिंह खरवा'
लेखक : सुरजनसिंह झाझड़

जमाने को चुनौती

प्रभु!,
एक दिन जब तू मेरे पास नहीं था
जमाना सीना तानकर मेरे सामने आ खड़ा हुआ।
बोला,–''पागल हार गया तू छोड़ दे अपना पागलपन!''
उसका अट्टहास गूंज उठा।
मेरी मानस वीणा के समस्त तार झनझना कर ढीले पड़ गये।
पर तभी अचानक तू सामने दिखाई दिया।
तेरे दर्शन मात्र से मेरी अभिव्यक्ति में प्रगल्भ जादू भर गया।
मैंने उस जमाने को चुनौती दी,–
''तुमने कितनी कुलाचें खाई है।
कितने रूप बदल कर आया तू?
टूट गया मैं पर झुका नहीं।
तुम पर सवार होकर मैंने अनचीतौ गहराइयाँ नापी।
अब भी हिम्मत हो, तो टकरा कर देख।
एक बार ही नहीं, सौ–सौ बार!!''
यह मेरा कड़कड़ाता जवाब था।
पर तुझे मेरे पास खड़ा देखकर उसके पसीना आ गया।
कुछ नहीं बोल सका वह!
तब मैं ही बोला,–
''दूर हट! जरा स्वस्थ हवा आने दे।''

– स्व. उदयभान सिंह जी चनाणा

गतांक से आगे

बीकानेर रियासत का संक्षिप्त इतिहास

– खींवसिंह सुलताना

महाराजा सुजान सिंह

महाराजा अनूप सिंह के छोटे पुत्र सुजान सिंह का जन्म वि.सं. 1747 में हुआ था। अपने बड़े भाई महाराजा स्वरूप सिंह के निधन के बाद सुजान सिंह 1757 (वि.सं.) में बीकानेर के शासक बने।

अजीत सिंह की बीकानेर पर चढ़ाई– महाराजा सुजान सिंह की अल्प आयु व उनके दक्षिण प्रवास को अनुकूल मौका जानकर जोधपुर महाराजा अजीत सिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई की और जोधपुर की सेना ने लाडनूं में डेरे किए। महाराजा सुजान सिंह के कुछ विरोधी सरदार वहाँ अजीत सिंह से मिल गए। महाराजा की अनुपस्थिति व कुछ सरदारों के अजीत सिंह से मिल जाने के कारण बीकानेर का सामर्थ्य कम हो गया और जोधपुर की सेना का बीकानेर पर अधिकार हो गया। बीकानेर में रहने वाले एक लुहार रामजी को यह घटना सहन नहीं हुई और वह अकेला ही जोधपुर की सेना से भिड़ गया व पाँच सैनिकों को मारकर वीरगति को प्राप्त हुआ। इस घटना से बीकानेर के सरदारों का भी सोया पुरुषार्थ जाग उठा और वे भूकरका के ठाकुर पृथ्वीराज व मलसीसर के बीदावत हिन्दू सिंह के नेतृत्व में जोधपुर की सेना पर टूट पड़े। अचानक हुए इस प्रत्याक्रमण से जोधपुर की सेना में खलबली मच गई व वह युद्ध के स्थान पर संधि कर वापिस लौट गई।

महाराजा सुजान सिंह का बरसलपुर पर आक्रमण– मुल्तान के व्यापारियों का एक काफिला जब बरसलपुर से गुजर रहा था तब वहाँ के भाटियों ने उसे लूट लिया। व्यापारी द्वारा शिकायत करने पर महाराजा सुजान सिंह ने भाटियों से लूटा हुआ माल वापिस करने को कहा। भाटियों द्वारा इन्कार करने पर महाराजा ने बरसलपुर पर आक्रमण कर दिया, थोड़े से संघर्ष के बाद भाटियों ने क्षमा मांगकर सारा लूटा हुआ माल व युद्ध व्यय दे दिया।

बख्त सिंह की बीकानेर पर चढाई– महाराजा अजीत सिंह के बाद अभय सिंह जोधपुर का शासक बना, शासक बनने पर उसने अपने छोटे भाई बख्त सिंह को नागौर की जागीर दी। बख्त सिंह ने बीकानेर पर अधिकार की इच्छा से बीकानेर पर चढ़ाई की। बीकानेर की सेना राजकुंवर जोरावर सिंह के नेतृत्व में आगे बढ़ी। बीकानेर की सेना के प्रथम आक्रमण में ही बख्त सिंह की सेना के पैर उखड़ गए और वह भागकर अपने डेरों में चली गई। यह समाचार मिलने पर जोधपुर से अभय सिंह एक बड़ी सेना के साथ अपने भाई से आ मिले। दोनों तरफ से फिर मोर्चाबन्दी हुई और युद्ध शुरू हुआ, परन्तु बीकानेर वालों ने गढ़ की रक्षा का अच्छा प्रबन्ध किया हुआ था। जब अभय सिंह को विजय की आशा ना रही तो अभय सिंह के आग्रह पर मेवाड़ के महाराणा संग्राम सिंह द्वितीय ने दोनों पक्षों में सुलह करा दी व बख्त सिंह व अभय सिंह वापिस नागौर लौट गए।

सुजान सिंह की मृत्यु– भूकरका के ठाकुर कुशल सिंह तथा भादरा के ठाकुर लाल सिंह में किसी कारणवश वैमनस्य उत्पन्न हो गया था। महाराजा सुजान सिंह ने वहाँ जाकर उनके बीच शांति स्थापित करवाई। वहीं रायसिंहपुर गाँव में महाराजा रोगग्रस्त हो गए और वि.सं. 1792 में उनका देहान्त हो गया।

महाराजा जोरावर सिंह

जोरावर सिंह का जन्म वि.सं. 1769 में हुआ था। अपने पिता की मृत्यु के बाद वि.सं. 1792 में वह बीकानेर का शासक बना।

अभय सिंह का बीकानेर पर आक्रमण– वि.सं. 1736 में जोधपुर की सेना बीकानेर राज्य में आकर उपद्रव

करने लगी। अभय सिंह व उनके भाई बख्त सिंह में अनबन के कारण बख्त सिंह व जोरावर सिंह के बीच मित्रता स्थापित हो गई थी जिसके परिणामस्वरूप बख्त सिंह ने मेड़ता पर अधिकार कर जोधपुर की ओर कूच किया। जोधपुर को अरक्षित जान अभयसिंह बीकानेर का घेरा उठा कर तुरन्त जोधपुर लौट गया।

जोहियों से भटनेर लेना– महाजन के ठाकुर भीम सिंह ने जोरावर सिंह की आज्ञा से भटनेर के तलवाड़े के जोहिया स्वामी भला (जिसके अधिकार में भटनेर था) व उसके पुत्रों को मार कर भटनेर पर अधिकार कर लिया परन्तु भीम सिंह ने गढ़ में मिली सारी सम्पत्ति को स्वयं हड़प लिया, जिससे नाराज होकर महाराजा ने हसन खाँ भट्टी को फौज देकर भटनेर भेजा। भीम सिंह ने कुछ समय तक तो संघर्ष किया फिर गढ़ छोड़कर भाग गया तथा वहाँ हसन खाँ का अधिकार हो गया।

अभय सिंह का बीकानेर पर दूसरा आक्रमण– पहले आक्रमण की असफलता से आहत अभय सिंह ने वि.स. 1797 में बीकानेर के कुछ विद्रोही सरदारों (ठाकुर लाल सिंह भादरा, ठाकुर संग्राम सिंह चूरू व ठाकुर भीम सिंह महाजन) के सहयोग से बीकानेर पर चढ़ाई कर दी और बीकानेर के गढ़ के चारों ओर मोर्चा बाँध दिया गया। इस अवसर पर बख्त सिंह के परामर्श से महाराजा जोरावर सिंह ने आनंदरूप व धांधल कल्याणदास को जयपुर महाराजा जयसिंह से सहयोग माँगने के लिए भेजा। अभय सिंह, जय सिंह का जामाता था इस कारण वे दुविधा में थे। उन्होंने अपने सरदारों से इस पर राय माँगी। सीकर के ठाकुर शिव सिंह की सलाह से उन्होंने 20,000 की सेना के साथ राजामल खत्री को जोधपुर पर चढाई के लिए भेजा। यह समाचार मिलने पर अभय सिंह घबरा गया और बीकानेर वालों को संधि प्रस्ताव भेजा। बीकानेर वालों ने उस अपमानजनक संधि को ठुकरा दिया और कहा कि हमारी ओर से उत्तर जय सिंह देंगे। अभय सिंह को निराश होकर लौट जाना पड़ा। इस अवसर पर भागती हुई जोधपुर की सेना को बीकानेर की फौज ने बुरी तरह लूटा। उधर जयपुरवालों ने युद्ध व्यय के नाम पर अभय सिंह से 21 लाख का नजराना लेकर जोधपुर का घेरा उठाया। अभय सिंह के घेरे के दौरान महाराजा जोरावर सिंह ने एक सफेद चील को देखकर यह दोहा कहा था–

ड़ाढाली डोकर थई, तूँ गई विदेस।
खून बिना क्यों खोसजे, निज बीका रां देस।।

मृत्यु– रेवाड़ी के राव गूजरमल की सहायता कर लौटते समय उनका शरीर अस्वस्थ हो गया और अनूपपुर नामक स्थान पर वि.सं. 1803 को उनका देहान्त हो गया।

जोरावर सिंह वीर, राजनीतिज्ञ व काव्य मर्मज्ञ थे। वह युद्ध से बढ़कर परस्पर मेल का महत्त्व मानते थे। वह संस्कृत भाषा के अच्छे कवि थे, उन्होंने दो ग्रन्थों 'वैद्यकसार' व 'पूजापद्द्यति'' की रचना की।

महाराजा गज सिंह

महाराजा जोरावर सिंह के नि:संतान मरने के बाद उनके निकटतम संबंधियों में से सबसे योग्य गज सिंह (जोरावर सिंह के काकोसा आनन्द सिंह का छोटा पुत्र) को बीकानेर के प्रमुख सरदारों ने बीकानेर का शासक बनाया।

जोधपुर की सहायता से अमर सिंह की बीकानेर पर चढ़ाई– ज्येष्ठ होने पर भी राजगद्दी से वंचित हो जाने पर अमर सिंह (गज सिंह का बड़ा भाई) जोधपुर महाराजा अभय सिंह से सैन्य सहयोग के लिए गया। अभय सिंह ने अपने बहुत से सरदारों को एक बड़ी सेना देकर बीकानेर पर भेजा। जोधपुर की सेना सरूपदेसर के पास आकर ठहरी, वहीं बीकानेर की सेना ने रामसर कुएँ पर मोर्चा बाँधा। लम्बे समय तक दोनों सेनाओं के बीच केवल हल्की मुठभेड़ें होती रही, परन्तु सीधा युद्ध नहीं हुआ। जोधपुर के सरदारों ने गज सिंह को कहलाया कि यदि भूमि के दो भाग कर एक अमर सिंह को दे दिया जाए तो हम वापिस लौट जाएँगे, परन्तु गज सिंह ने उत्तर दिया कि हम इस तरह सुई की नोक

के बराबर भूमि भी नहीं देंगे और कल प्रात: तलवार से हमारी शान्ति की शर्तें तय होगी। दूसरे दिन दोनों सेनाओं के मध्य भीषण युद्ध हुआ, जोधपुर की सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी उनका सेनाध्यक्ष भंडारी रतनचन्द जैतपुर के ठाकुर स्वरूप सिंह के हाथों मारा गया। बीकानेर के भी बहुत से सरदार युद्ध में काम आए। जोधपुर की सेना पराजित होकर लौट गई।

बीकमपुर पर गजसिंह का अधिकार होना– उन दिनों बीकमपुर के भाटियों का उपद्रव काफी बढ़ गया था। बीकानेर की सेना आने पर बीकमपुर के राव स्वरूप सिंह ने भाटी कुंभकर्ण के मार्फत दस हजार रुपये पेशगी के ठहराकर संधि कर ली। इसी बीच गजसिंह के पिता का निधन हो गया। पेशगी के दस हजार रुपये ना दिये जाने पर भाटी कुंभकर्ण ने महाराजा की आज्ञा से स्वरूप सिंह को मारकर बीकमपुर पर अधिकार कर लिया।

बख्त सिंह की सहायता को जाना– अभय सिंह के देहान्त के बाद रामसिंह जोधपुर का शासक बना, इस अवसर पर बख्त सिंह ने टीका भेजा जिसे राम सिंह ने बख्त सिंह द्वारा जालौर छोड़ने पर स्वीकार करने की बात कही जिसे बख्त सिंह ने इन्कार कर दिया। इस पर राम सिंह ने मेड़तियों की सहायता से बख्त सिंह पर आक्रमण कर दिया। बख्त सिंह ने महाराजा गज सिंह से सहायता माँगी, इस पर महाराजा गज सिंह 17,000 सैनिकों के साथ उनकी सहायता को गए। राम सिंह की सहायता के लिए जयपुर से ईश्वर सिंह ने राजावत दलेल सिंह को 4000 सवार के साथ भेजा हुआ था। दलेल सिंह के प्रयास से दोनों पक्षो में समझौता हो गया।

बीकमपुर पर जैसलमेर का अधिकार– जिस दौरान महाराजा गज सिंह बख्त सिंह की सहायतार्थ गए हुए थे तब अवसर देखकर जैसलमेर के रावल अखै सिंह ने बीकमपुर पर चढ़ाई कर दी। रावल अखैराज ने छल से भाटी कुंभकर्ण को मार कर बीकमपुर पर अधिकार कर लिया, तब से बीकमपुर जैसलमेर राज्य में है।

दूसरी बार बख्त सिंह की सहायता कर उसे जोधपुर का राज्य दिलवाना– वि.सं. 1807 में जयपुर के ईश्वर सिंह के देहांत से राम सिंह का एक प्रधान सहायक जाता रहा। इससे राम सिंह के कुछ विरोधी सरदारों ने बख्त सिंह से आग्रह किया कि अब राम सिंह की स्थिति कमजोर है आप जोधपुर पर अधिकार कर लो। बख्त सिंह ने अपनी सहायता के लिए बीकानेर से गज सिंह को बुला लिया। जोधपुर शासक राम सिंह थोड़े से साथियों के साथ मेड़ता था। बख्त सिंह व गज सिंह की सम्मिलित सेना ने दूदासर तालाब के पास मेड़तियों को हराया। वि. सं. 1808 में गज सिंह तथा बख्त सिंह ने जोधपुर पर आक्रमण किया, तब राम सिंह वहाँ नहीं था। जोधपुर के गढ़ के भीतर उपस्थित सरदार उनकी सेवा में उपस्थित हो गए व गढ़ उनके सुपुर्द कर दिया। किले में प्रवेश कर गज सिंह ने बख्त सिंह को गद्दी पर बैठाया व स्वयं बीकानेर लौट आए।

विद्रोही लाल सिंह को अधीन करना– वि.सं. 1813 के आस-पास सिक्खों ने नोहर में उत्पात मचाना आरम्भ कर दिया जिन्हें भादरा के ठाकुर लाल सिंह की शह प्राप्त थी। इस पर महाराजा ने पुरोहित जगरूप व चौहान रूपराम को सेना देकर लाल सिंह के विरुद्ध भेजा। पीछे से शेखावत नवल सिंह भी 4000 सवार के साथ उधर गये। लाल सिंह के सहयोगी सरदारों का दमन करने पर लाल सिंह ने भी समर्पण कर दिया और नवल सिंह के मार्फत महाराजा की सेवा में उपस्थित होकर उनकी अधीनता स्वीकार कर ली।

माधो सिंह की सहायतार्थ सेना भेजना– वि.सं. 1824 महाराजा माधो सिंह की ओर से यह संदेश आया कि जोधपुर महाराजा विजय सिंह ने भरतपुर के जाट, राजा जवाहरमल से जयपुर के विरुद्ध संधि कर ली, इसलिए युद्ध के अवसर पर आप जयपुर का पक्ष लेना। भरतपुर व जयपुर की सेना के मध्य मावंडे में भारी युद्ध हुआ जिसमें भरतपुर की करारी पराजय हुई। इस युद्ध में महाराजा गज सिंह ने जयपुर का साथ दिया जबकि महाराजा विजय सिंह ने भरतपुर का।

मृत्यु– महाराजा गज सिंह का बीमारी के कारण वि.सं. 1844 में देहांत ने गया। महाराजा गज सिंह की योग्यता व नीति कुशलता देखकर ही सरदारों ने, बडे भाइयों के होते हुए भी उन्हें बीकानेर का शासक बनाया।

वह वीर, राजनीतिज्ञ, प्रजापालक, मैत्री को हमेशा निभाने वाले, कवि, साहित्यानुरागी थे। राज्य विरोधी आचरण करने वालों को वो कभी भी क्षमा नहीं करते थे। राज्य विरोधी आचरण करने पर उन्होंने अपने पुत्र राज सिंह को भी कैद में डाल दिया था। प्रजा के कष्टों की ओर से वे कभी उदासीन नहीं रहते थे। उन्होंने हमेशा प्रजा को सुख पहुँचाने का कार्य किया। राजपूताने के शासकों के मध्य उनका बड़ा सम्मान था और जब कभी कोई झगड़ा होता था तो मध्यस्तता करने के लिए उन्हें बुलाया जाता था।

महाराजा गज सिंह के बाद उनका ज्येष्ठ पुत्र राज सिंह सिंहासन पर बैठा परन्तु वह केवल एक ही वर्ष शासन कर पाया (कहीं–कहीं केवल 21 दिनों तक शासन का वर्णन आता है) वि.सं. 1844 में ही उसका देहान्त हो गया। राज सिंह के बाद उसका पुत्र प्रताप सिंह शासक बना, अपुष्ट स्रोतों से पता चलता है कि पाँच माह बाद ही महाराजा गजसिंह के एक पुत्र सूरत सिंह ने उसका वध कर दिया था। **(क्रमशः)**

आहिस्ता चल जिन्दगी,
अभी कई कर्ज चुकाने बाकी हैं,
कुछ दर्द मिटाने बाकी हैं,
कुछ फर्ज निभाने बाकी हैं।

रफ्तार में तेरे चलने से कुछ रूठ गये, छूट गये,
रूठों को मनाना बाकी है, रोतों को हंसाना बाकी है।

कुछ हसरतें अभी अधूरी हैं,
कुछ काम भी और जरूरी हैं,
ख्वाहिशें जो छूट गई इस दिल में,
उनको दफनाना बाकी है।

कुछ रिश्ते बन कर टूट गये, कुछ जुड़ते जुड़ते छूट गये,
उन टूटे-फूटे रिश्तों को, जख्मों को मिटाना बाकी है।

तुम आगे बढो मैं आता हूँ,
क्या तुम्हें छोड़ जी पाऊँगा?
इन सांसों पर हक है जिनका,
उनको समझाना बाकी है।

आहिस्ता चल जिन्दगी, अभी कई कर्ज चुकाने बाकी हैं।

– कवि गुलजार

अपनी बात

एक मछुआ जल्दी उठा और मछलियाँ पकड़ने के लिए नहीं के किनारे पहुँच गया। बहुत जल्दी उठ गया था, नदी किनारे आ भी गया पर अभी रात अंधेरी थी, बादल भी घिर रहे थे, सूरज अभी निकला नहीं था। विचार कर रहा था कि थोड़ी रोशनी हो जाए तो नाव खोलूं और मछलियाँ पकड़ने जाऊँ। रोशनी थी नहीं अतः बैठ गया नदी के किनारे पर। बैठे-बैठे इधर-उधर देखा तो पता लगा कि पास ही एक झोला पड़ा है। कुछ काम तो था नहीं अतः इस झोले को ही टटोला। टटोलकर देखने पर उसे लगा कि झोले में बहुत से पत्थर भरे हैं। बैठा-बैठा क्या करे, समय काटना था। उसने झोले में हाथ डालकर एक पत्थर निकाला और उसे पानी में फेंका। आवाज हुई-छपाक। लहरें उठीं। अब उसने दूसरा पत्थर भी झोले से निकाला और उसे भी फेंका। पुनः आवाज सुनी-छपाक। समय बिताने के लिए उसे यह काम मिल गया और एक-एक निकाल कर पत्थर फेंकता रहा। फिर सूरज निकलने लगा। रोशनी हो गई। उस समय झोले में से आखिरी पत्थर हाथ में आया। सूरज की किरणें पड़ी। वह पत्थर नहीं था, हीरा था। उसकी छाती पर यह देखकर क्या गुजरी होगी, सोच सकते हैं। छाती पकड़ कर बैठ गया- तो वे सब पत्थर नहीं हीरे ही थे, जो अंधेरे में फेंकता रहा और छपाक-छपाक पानी की आवाज सुनता रहा।

अंधेरे में जो पत्थर दिखाई पड़ता है, वह रोशनी आने पर हीरा हो जाता है। जो जागे और जिन्होंने थोड़ा अपने ध्यान को साफ सुथरा किया, जिन्होंने अपने भीतर की भूमि सुधारी, घास-पात काटा, कूड़ा करकट हटाया, जिन्होंने भीतर थोड़ी-सी दीए से बाती जलाई, उन्होंने पाया कि यह जीवन हीरा है।

आम व्यक्ति का अनुभव तो इस बात से राजी नहीं होगा क्योंकि उसने जिन्दगी में कुछ जाना नहीं। अंधेरे में जीए हैं अतः पत्थरों की ही पहचान रही है हीरों से मुलाकात ही नहीं हुई। पर यह जीवन अमोल है। बड़ी मुश्किल से मनुष्य की यह देह मिली है। जन्मों-जन्मों की यात्रा के बाद, न मालूम कितनी योनियों में यात्रा के बाद यह देह मिलती है। न मालूम कितने जन्मों तक मनुष्य बनने की प्रार्थना की है। अब प्रार्थना पूरी हो गई, मनुष्य देह मिल गई, अब तो कुछ करो। अब इस सौभाग्य का कुछ उपयोग करो। अब इस अवसर को किसी और महा अवसर में बदलो। इसे कौड़ियों में मत गंवाओ। ध्यान रहे लोग इस अक्सर को कोड़ियों में ही गंवा रहे हैं। लोग कागज के नोटों के ढेर लगाए जा रहे हैं, और सोच रहे हैं जिन्दगी सार्थक हो गई। या कोई पदों की सीढी पर चढ़ा जा रहा है और सोचता है जिन्दगी सार्थक हुई जा रही है। यही ढंग है लोगों के जिन्दगी गंवाने के।

एक कैसा अमूल्य अवसर मिला है जहाँ जीवन की परम अनुभूति प्रगाढ हो, जहाँ मनुष्य के भीतर सूरजों का सूरज उगे। जहाँ अन्दर ऐसे अमृत का झरना बहे कि मौत भी उसे हरा न सके। जहाँ व्यक्ति शाश्वत से जुड़ जाए। श्री क्षत्रिय युवक संघ की साधना में तत्परता से लगे रहें तो यह वह उपाय है जिसमें भीतर रोशनी प्रकट हो सकती है। संघ का मार्ग उपासना ही है। सांसारिक जगत के सभी आकर्षण अंधकार की ओर ही खींचते हैं। उन आकर्षणों से पार संघ-साधना पर चलने वालों ने अपने भीतर वह रोशनी महसूस की है जो शान्ति देती है, जीवन को महाअवसर बनाने की राह पर तत्परता से बढ़ाती है।

●

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं –

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
01.	प्रा.प्र.शि. (बालिक)	7.4.2023 से 10.4.2024	श्रीमद् कालू गणी समाधि स्थल आमली रोड़, गंगापुर (भीलवाड़ा)
02.	उ.प्र.शि.	18.5.2024 से 29.5.2024	गांधीनगर इन्टर नेशनल स्कूल राधेजा गाँव–गांधीनगर

● गांधीनगर से 12 कि.मी. दूर ● साबरमती रेल्वे स्टेशन से 33 कि.मी. दूर ● कालुपुर रेल्वे स्टेशन से 37 कि.मी. दूर

पात्रता– कम से कम 2 प्राथमिक शिविर, एक माध्यमिक शिविर किया हुआ हो। 10वीं कक्षा की परीक्षा दी हुई हो।

- 50 वर्ष से अधिक उम्र वालों को शिक्षण के सहयोगी के रूप में ही बुलाया जाएगा।
- गणवेश अनिवार्य है।
- सायंकालीन प्रार्थना के लिए धोती, कुर्ता व केशरिया साफा लाना है।
- 23 मई को बीच में आ सकते हैं, संभाग प्रमख से स्वीकृति लेकर।

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
03.	मा.प्र.शि. (बालिका)	23.5.2024 से 29.5.2024	काणेटी प्राथमिक शाला, UPO काणेटी तह. साणंद जिला–अहमदाबाद (गुजरात)

पात्रता– कम से कम तीन शिविर किए हुए हो। दसवीं की परीक्षा दी हुई हो। आयु 16 वर्ष से 30 वर्ष के बीच।

- तीस वर्ष से अधिक आयु वाले को शिक्षण के लिए बुलाया जावे वे ही आएँ।
- गणवेश अनिवार्य है।
- सायंकालीन प्रार्थना हेतु साड़ी या लहंगा–लूगड़ी केशरिया।
- साबरमती रेल्वे स्टेशन से 30 कि.मी. तथा आसरवा रेल्वे स्टेशन से 30 कि.मी.।

दीपसिंह बेण्याकाबास

शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

पृष्ठ 10 का शेष

युग पुरुष पूज्य श्री तनसिंह जी

नहीं है। 'निज को न बनाया तो जग रंच नहीं बनता।' पूज्य तनसिंहजी दूरदृष्टा थे। गीता आधारित श्री क्षत्रिय युवक संघ के माध्यम से साधक का पूरा जीवन निखारने का कार्य होता रहता है। साधक यह भी समझ लेता है कि उसका जीवन केवल उसके लिए ही नहीं है, वह दूसरों के लिए जीता है। संघ संस्कार निर्माण के अपने मुख्य उद्देश्य के अलावा अन्य सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी अपना प्रयास करता रहता है।

एक ध्येय, एक मार्ग, एक नेता, एक ध्वज के तले संस्कारित संघ के प्रयासों से रजत जयंती एवं हीरक जयन्ती में समाज के अनुशासित एवं वृहद स्वरूप के दर्शन मिले हैं। उनके अरमानों का मधुर नाद उनके जन्म शताब्दी वर्ष की तैयारियों में स्पष्ट रूप से सुनाई पड़ रहा था। ऐसे महापुरुष की समाज के लिए की गई तपस्या को नमन। उनके बताये मार्ग पर निरन्तर चलते रहें, यही लगन लगी रहे। ●

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ
स्थापना :- २१/०४/१९९०

-: श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ के कार्य :-

- साइकल स्कीम
- 700 सभ्य की बचत स्कीम
- व्यसन मुक्ति
- कुरिवाज का त्याग
- अंध श्रद्धा को दूर करना
- प्राथमिक कक्षा के बालकों के लिए हर साल फ्री में नोटबुक और जरूरी सामग्री देना
- इनाम वितरण
- दशहरा महोत्सव
- महाराणा प्रताप जयंती महोत्सव
- गांव की प्राथमिक स्कूल में कंप्यूटर लेब निशुल्क बालकों के लिए

देवेंद्रसिंह, घनश्यामसिंह
अध्यक्ष

सिद्धराजसिंह, अनिरुद्धसिंह
उपाध्यक्ष

हरपालसिंह, जयदीपसिंह
उपाध्यक्ष

यशराजसिंह, तजवितसिंह
मंत्री

हिरेन्द्रसिंह जटुभा
संगठन मंत्री

मित्राजसिंह, नवलसिंह
संगठन मंत्री

महावीरसिंह, महेंद्रसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

भगीरथसिंह, किशोरसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

रामदेवसिंह नारुभा
महाराणा प्रताप वर्षगांठ - समन्वयक

शक्तिसिंह, राजेन्द्रसिंह
महाराणा प्रताप जयंती - सह संयोजक

सिद्धराजसिंह, जयेंद्र सिंह
दशहरा महोत्सव समन्वयक

युवराजसिंह, महेंद्रसिंह
दशहरा पर्व - सह संयोजक

होली की हार्दिक शुभकामनाएं

Vision Comfort Line+ Mattress

Onkar Singh Shekhawat

HARSH CORPORATIONS

68 Giriraj Nagar, Govindpura,
Kalwar Road, Jaipur +91 97173 59655

VISION COMFORT LINE MATTERS

अप्रेल, सन् 2024
वर्ष : 61, अंक : 04

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या – Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्...

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह